मिथ्यात्व

आक्षेपवाद को छोडकर सापेक्षवाद को
अपनाने का संदेश देती हुई पुस्तिका

.....युगप्रधान आचार्यसम पू.पं. श्री चंद्रशेखर विजयजी म.सा.

समर्पणं...

एक ऐसे सच्चे मोक्षार्थी

जिन्होंने अन्य धर्म के पतंजलि आदि ऋषियों को भी 'महामुनि' की उपाधि दी थी।

जिन्होंने अन्य धर्म के शास्त्रों के साथ संघर्ष नहीं, बल्कि समन्वय साधने में योगसाधना का उपयोग किया था।

जिन्होंने 'अद्वेष' को साधना का प्रथम सोपान कहा था।

जिन्होंने कदम -कदम पर मताग्रह के बदले तत्वाग्रह रखने की सीख दी थी।

जिनके 1444 ग्रंथरचना के सफर के सार रूप सिर्फ एक ही पंक्ति उभर कर आती है- 'विरोध थे साधना का विरोधाभास है'।

ऐसे उदार और विशाल योगिहृदय के मालिक

सूरिपुरंदर श्री हरिभद्रसूरीराज

के करकमलों में...

मिथ्यात्व

आक्षेपवाद को छोडकर सापेक्षवाद को अपनाने का संदेश देती हुई पुस्तिका

*** दिव्याशीष ***

पूज्यपाद आचार्य भगवंत श्रीमद् विजय **प्रेमसूरीश्वरजी महाराजा** के शिष्य
शासन प्रभावक युगप्रधान आचार्यसम **पू.पं.श्री चंद्रशेखरविजयी म.सा.**

*** शुभाशिष ***

पूज्य गच्छाधिपति
आचार्य श्रीमद् विजय जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.
आचार्य श्रीमद् विजय हंसकीर्तिसूरीश्वरजी म.सा.

*** लेखक ***

मुनि गुणहंस विजयजी म.सा.

* प्रकाशक *

कमल प्रकाशन ट्रस्ट

102–अे, चंदनबाला कोम्पलेक्स
आनंदनगर पोस्ट ऑफिस के सामने, भट्ठा, पालडी,
अहमदाबाद फोन: 26605355

प्रथम संस्करण (गुजराती) : 3000 नकल
द्वितीय संस्करण(हिन्दी) : 1000 नकल

*** अनुवादक ***

श्रीमान शा झुमरलालजी लुंकड,चेन्नई

DESIGN & PRINTED BY

Firsst Look
IMPRESSION GUARANTEED....

प्रस्तावना

जैन दर्शन को जो थोड़ा सा भी जानते है, उनके लिए 'मिथ्यात्व' शब्द और उसका अर्थ अति प्रसिद्ध है। आत्मा का विकास चौदह गुणस्थानक के क्रम से होता है। इसमें सबसे प्रथम गुणस्थानक का नाम है मिथ्यात्व ! ये गुणस्थानक बहुत ही खराब गिना जाता है क्योंकि

- अनंतानंत अभव्य अनादिकाल से इसी स्थान पर होते हैं और अनंतकाल तक इसी स्थान पर रहेंगे।
- भव्य भी जो अचरमावर्ति है, वे भी सभी इसी स्थान पर रहेंगे।
- चर्मावर्ती भव्य भी जिन्होंने अभी तक विशिष्ट गुणविकास नहीं साधा, वे सभी भी इसी स्थान पर रहेंगे।
- इस गुणस्थानक पर रहे हुए जीव ही अजैन कहलाते हैं।

इसी कारण से 'मिथ्यात्व' यह लोकोत्तर–शासन में एक बहुत बड़ा अपशब्द, बहुत बड़ी गाली कही जा सकती है।

लौकिक जगत में जैसे 'चोर, व्यभिचारी, लुच्चा, लफंगा' ये शब्द गाली है और सुननेवाले को हृदय तक चुभ जाते है, वैसे ही लोकोत्तर शासन में 'मिथ्यात्वी' शब्द गाली जैसा है, जो सुननेवाले को हृदय तक चुभ जाता है।

ये एक बात... अब दूसरी बात...

वि.सं. 1952 से लगाकर आज तक जैन संघ में तिथि प्रश्न के बहुत सारे विवाद हुए हैं, यानि कि 120 वर्ष हो गए इस संघर्ष को !!!

भारत सरकार को जिस तरह कश्मीर प्रश्न सताता है, जैन संघ को उसी प्रकार तिथि प्रश्न सताता है। प्रश्न ये है कि शास्त्रों में जिस रीति से तिथि की आराधना बताई गयी है, उस प्रकार अगर न करने में आये तो, इसमें नुक्सान क्या और कितना ?

मान लो कि एक तिथि सच्ची है, तो दो तिथि वालों को सारे नुक्सान होंगे।

मान लो कि दो तिथि सच्ची है, तो एक तिथि वालों को सारे नुक्सान होंगे ?

कौन सी तिथि सच्ची, इसकी यहां चर्चा नहीं की है। हाँ, दोनों पक्ष अपनी अपनी मान्यता को सही मान रहे हैं पर हम पहले यह तो देख लें "कि अगर हम तिथि की आराधना शास्त्रों के अनुसार नहीं करें, तो क्या नुक्सान है ?" ये नुक्सान इस प्रकार दर्शाया गया है कि

उदयंमि जा तिहि सा हु पमाणम्मि होइ कायव्वा ।
इहरहा आणा-अणवत्थ-मिच्छत्त-विराहणं पावे ।।

सूर्योदय के समय जो तिथि होती है, वही तिथि सच्ची मान कर आराधना करनी चाहिए। अगर ऐसा करने में नहीं आता हो तो, आज्ञा–अनवस्था–मिथ्यात्व और विराधना, ऐसे चार दोष लगते हैं। ये चार दोष किस प्रकार लगते हैं, इसकी सामान्य समझ इस प्रकार हो सकती है। भगवान की आज्ञा के अनुसार तिथि नही पाली यानि आज्ञाभंग नाम का दोष लगेगा।

एक व्यक्ति आज्ञा भंग करता है, उसको देखकर दूसरा व्यक्ति भी करता है ऐसी गलत वस्तु की परंपरा चले उसका नाम अनवस्था।

आप प्रभु की आज्ञा नही पालते इसका मतलब यह है कि आपको प्रभु की आज्ञा पर श्रद्धा नही है और प्रभु की एक भी आज्ञा पर श्रद्धा न होना यानि वो मिथ्यात्वी ! इस प्रकार सच्ची तिथि नही करने से मिथ्यात्व का दोष लगता है।

आप प्रभु की आज्ञा न पालो, यह प्रमाद ! इसके कारण विराधना होती है। इस प्रकार प्रमाद के कारण कोई देवी–देवता आप पर उपद्रव करते है, यह संभावना पक्की है। इसके कारण आत्मविराधना होती है। (आत्मा यानि यहा सारे शरीर को ही लेना है। शरीर में वळगाड आदि के कारण कोई भी नुकसान हो यानि आत्मविराधना गिनि जाती है।)

आज्ञा का पालन यानि प्रमाद यानि असंयम, इसके कारण मूल या उत्तर गुणों की हानि होती है, जो व्रत मलिन करते है यह है संयम विराधना !

यह चंडाल–चौकडी जैसे चार बडे दोष लगते है, इस लिए सची तिथि की आराधना के लिए हमेशा प्रयत्न करना जरुरी बनता है।

स्वाभाविक है कि किसी को भी मिथ्यात्वी बनना पसंद नहीं आएगा। पूरा जीवन लोच–विहार–स्वाध्याय–वैयावच्च–तप आदि बड़ी संख्या में करने के बाद भी अगर ये मिथ्यात्व आदि चांडालों का भोग बनना पड़े, तो यह किसे पसंद आएगा?

शायद इसी कारण से ....

- दो तिथि पक्षवाले ऐसा कहते हैं कि "हम ही सच्ची तिथि का पालन करते है, आप गलत करते है, इसलिए आप मिथ्यात्वी ?"
- एक तिथि पक्षवाले ऐसा कहते हैं कि "हम सच्ची तिथि का पालन करते है, आप ही गलत करते हो, इसलिए आप मिथ्यात्वी ?"

इसमें दूसरे को मिथ्यात्वी साबित करने की भावना किसी की भी ना हो,और ना ही होनी चाहिए, पर स्वयं मिथ्यात्वी नहीं , ऐसा साबित करने की भावना तो होगी ही ना, और अगर

दूसरे मिथ्यात्वी साबित होते हो, तो उनको सम्यक्त्वी बनाने की भावना भी होगी ही, और होनी भी चाहिए। यही करुणा है, वात्सल्य है।

अब मुख्य बात.....

दर्शाये जा रहे पाठ के आधार पर हम मान लें कि 'जो सच्ची तिथि की आराधना ना करे, वो मिथ्यात्वी ! ठीक? तो इस पुस्तक में हम श्री नीशीथचूर्णी के और ऐसे दूसरे भी पाठ देखेंगे जिनमे दूसरी बातों में गलत करनेवालों को मिथ्यात्वी कहा गया है।

तो.....

- ऐसी कौन कौन सी बातें हैं, जिसमें मिथ्यात्व लगता है?
- मिथ्यात्व शब्द का अर्थ सिर्फ प्रथम गुणस्थान ही होता है या और कोई अर्थ भी हो सकता है?
- जो दूसरा भी अर्थ हो सकता हो, तो ये दूसरे अर्थवाला मिथ्यात्व जिसमें हो, तो उसका गुणस्थान कौनसा होगा ? वो वंदन योग्य हो सकता है ? वो जैन संघ में गिना जा सकेगा ?

विस्तार से इन सभी तथ्यों को इस पुस्तक में हमें देखना है।

पुस्तक लिखने के पीछे का आशय

श्री संघ में सभी को (1) सम्यग्दर्शन की प्राप्ति, (2) इसके द्वारा सही समाधि, राग–द्वेष हानि की प्राप्ति....यही एकमात्र आशय है। सभी शांत चित्त से पढ़ें, पढ़ावें ... जिनाज्ञा विपरीत कुछ भी लिखा हो तो त्रिविध त्रिविध मिच्छामि दुक्कडम....

युगप्रधानाचार्य सम

पू.पं गुरुदेव **श्री चंद्रशेखर विजयजी म.सा.** के

शिष्य गुणहंस विजय, बारडोली।

मिथ्यात्व कहा कहा लगता है ?

(1) **समितिसु असमियस्स गुत्तीसु य अगुत्तस्स मासलहुं-सव्वहिं-सव्वसमितीसु सव्वगुत्तीसु य। असमितगुत्तस्स आणाभंगदोसो, अणवत्थमिच्छन्त-आयसंजमविराहणादोसा य भवंति ।।**

-श्री निशीथ-४० चूर्णि

अर्थ: समितिओं में जो समिति वाले न हो, गुप्तियों में जो गुप्ति वाले न हो, उनको सभी समितियों में एवं सभी गुप्तियों में मासलघु प्रायश्चित आता है।

समिति न पालनेवाले और गुप्ति न पालनेवाले को आज्ञाभंग का दोष लगता है, अनवस्था–मिथ्यात्व–आत्मविराधना–और संयम विराधना का दोष लगता है।

भावार्थ: यहां इर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभण्डमत्तनिखेवणा समिति, पारिष्ठापनिका समिति, इन पांचों में से किसी भी समिति को नहीं पालनेवाले को आज्ञाभंग, मिथ्यात्व,आदि सभी दोष लगते हैं।

अब हर समिति के बारे में जो अलग–अलग विचार करें तो

- जो संयमी अँधेरे में विहार करे, वो इर्यासमिति का पालन कर ही नहीं सकता, अतः वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी उजाले में भी नीचे देखकर न चले, वो मिथ्यात्वी !
- उत्तराध्ययन सूत्र का वचन है कि

इंदियत्थे विवज्जिन्ता, सज्झायं चेव पंचहा ।
तम्मुत्ती तप्पुरक्कारे संजए इरियं रीए ।

चलते समय कुछ भी सुनने का, देखने का, सूंघने का, स्पर्श करने का नहीं....तथा पांच में से एक भी प्रकार का स्वाध्याय नहीं करना। सिर्फ नीचे देखकर चलना। ये है इर्यासमिति ।

अब जो संयमी चलते चलते आसपास देखे, चलते चलते बात करे,सुने, बोले, चलते चलते गाथा का रटण– पुनरावर्तन करे, चलते चलते चिंतन करे...वो इर्यासमिति का भंग करनेवाला होगा, ये पक्का ! इसलिए निशिथपाठ के आधार पर वो मिथ्यात्वी बनता है।

- उपाश्रय में भी जो नीचे देखे बिना चले, वो मिथ्यात्वी! जितने समय उसने नीचे नहीं देखा, उतने समय वो मिथ्यात्वी ! जब इर्यासमिति का वो बराबर पालन करे, तब वो वापस सम्यक्त्वी–संयमी !

- डोली में या व्हीलचेयर में विहार करनेवाला संयमी इर्यासमिति का पालन न कर पाने से वो मिथ्यात्वी !

ये पांच विकल्प इर्यासमिति में देखे।
इसी प्रकार भाषासमिति में विचार करें तो,

- मुहपत्ति के उपयोग के बिना बोले, वो मिथ्यात्वी !
- क्रोध के साथ कुछ भी बोले, तो संयमी मिथ्यात्वी !

एषणा समिति यानि 42 दोष बिना की निर्दोष गोचरी...
जो संयमी एक भी दोष का सेवन करे, वो एषणासमिति का भंजक बनता है।
इसका मतलब ये ही है कि

- जो संयमी विहारधाम में स्वयं के लिए बनायी गयी आधाकर्मी रसोई का उपयोग करे, वो मिथ्यात्वी !

जो संयमी अपने साथ ही रसोड़ा रखे और उसकी गोचरी का उपयोग करे, वो मिथ्यात्वी !

- घरों में बनायी गयी रसोई (संयमी के आने से पहले–संयमी के लिए) अगर बहनें नीचे रखे, और उसमें से संयमी वहोरे, तो स्थापना दोष का सेवन करनेवाला संयमी मिथ्यात्वी !
- गृहस्थ जब उपाश्रय में संयमी को वोहराने हेतु कोई भी खाद्य सामग्री लाये, और संयमी उसे वोहरे, तो वो संयमी मिथ्यात्वी !
- एषणासमिति में ऐसी सैंकड़ों बातें हैं, जिसमे निशिथपाठ के आधार पर संयमी मिथ्यात्वी बनता है।

चौथी समिति में विचार करें तो

- जो संयमी डांडा नीचे रखते समय डांडे के पर–नीचे के भाग को न पूंजे, और दीवार और ज़मीन का भाग न पूंजे (जहाँ डांडा ज़मीन को स्पर्श कर रहा हो) वो संयमी मिथ्यात्वी !
- जो संयमी टेबल–पाट आदि नीचे ज़मीन पर पूंजने के बिना हिलाये, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी पुस्तक खोलते समय, एक एक पन्ना खोलते समय पूंजनी आदि से न पूंजे, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी पुस्तक– उपधि–स्टेशनरी आदि कोई भी वस्तु को लेते या रखते समय

व्यवस्थित तरीके से पूंजे नहीं, वो मिथ्यात्वी !
ऐसी सैंकड़ों बातें इस समिति के बारे में हैं।
अंतिम समिति के बारे में विचार करें

कुल 1024 भेद में से सिर्फ 1 भेद शुद्ध है, बाकी सभी अशुद्ध ! इन 1023 भेद में से कोई भी एक भेद में संयमी मात्रू या स्थंडिल परठथा है, तो वो मिथ्यात्वी !

इसका मतलब ये हुआ कि

- बड़ी या छोटी नाली वाली कुण्डी में मातरू परठनेवाला संयमी मिथ्यात्वी !
- जो संयमी वाड़े में स्थंडिल जाए, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी की वडनीति को भंग कर संडास में या बाहर किसी जगह पर फेंके, वो संयमी मिथ्यात्वी !

ऐसी बहुत सारी बातें इस समिति में विचार करने योग्य हैं।

श्री नीशीथ का पाठ फिर से ध्यान में लें,

कोई भी समिति में जो संयमी दोष का सेवन करे, असमित बने, ... वो मिथ्यात्वी !

प्रश्न: इस प्रकार तो वर्तमान काल में लगभग सभी संयमी मिथ्यात्वी ही साबित होंगे, तो क्या जिनशासन का विच्छेद माना जाए?

उत्तर: यही तो हमको विचार करना है। शास्त्रपाठ के हिसाब से सभी जो मिथ्यात्वी साबित होंगे, तो शासन विच्छेद मानना ही पड़ेगा।यानि हमको कोई सम्यक विचार करना पड़ेगा।

प्रश्न: हम अगर ऐसा मान लें कि ये सभी दोष जो अपवाद मार्ग में सेवन किये जायें, तो कोई चिंता नहीं। क्योंकि किसी कारणवश जयणापूर्वक दोष का सेवन करें तो वास्तव में दोष लगता नहीं।

उत्तर: ये बात आपकी 100 प्रतिशत सच्ची है कि

कोई भी दोष (1) पुष्ट कारण से सेवन करने में आये (2) जयनापूर्वक सेवन करने में आये तो...(कम से कम दोष से निपटाने में आये उसका नाम जयणा), तो वो अपवाद रूप बनता है। और इसमे मिथ्यात्व लगता नहीं।

परंतु

जो संयमी जितने दोषों का सेवन करता है, क्या वो संयमी सभी दोष अपवाद रूप में ही सेवन करता है? क्या हम ऐसा मान सकते हैं?

उदाहरण

- संयमी चलते चलते बातें करते हैं–सुनते हैं–चिंतन करते हैं....तो क्या सभी संयमी ये सब अपवाद रूप में करते हैं? क्या सभी के पास पुष्टालंबन है? सभी जयना पालते हैं क्या? संयमी कई बार मुहपत्ति के बिना भी बोलते हैं, तो क्या सभी संयमी पुष्ट कारण से ही उपयोग नहीं रखते?
- संयमी शायद आधाकर्मादि बड़े दोष सेवन करनेवाले कम होंगे, मगर स्थापनादि दोष सेवन करनेवाले तो खूब हैं ! तो क्या सभी पुष्ट कारणों से ही ऐसा करते हैं ?
- संयमिओं में डाँडा लेते या रखते समय पूंजनी से विधि के अनुसार क्रिया करनेवाले कितने? ऐसे पाट–पाटला जरा से भी हिलाते, पुस्तकादि रखते समय पूंजने की विधि करनेवाले कितने? तो क्या ये सभी संयमी कोई पुष्टालंबन से विधि भंग करते हैं ?
- एक आचार्य भगवंत ने भरूच में मुझे एक बात कही " कि 35 वर्षों से भी ज्यादा के दीक्षा पर्याय के दरम्यान मैंने एक बार भी वाड़ा का उपयोग नहीं किया। अरे, प्याले में ले जाकर भी मैं कभी परठने नहीं गया। मुम्बई से लगाकर सभी क्षेत्रों में मुझे सही और सीधे जाने की जगह मिली ही है...."
- इसका मतलब ये स्पष्ट है कि वडनीति के लिए सभी क्षेत्रों में जगह बहुत है। फिर भी जो संयमी वाड़ा का उपयोग करते हैं, तो क्या सभी संयमी पुष्टालंबन से ही वाड़ा का उपयोग करते हैं?(वृद्ध आदि की बात अपवाद में गिनी जा सकती है)

इसकी चर्चा हम आगे करेंगे।

पर इतना तो पक्का है कि समितियों का भंग वर्त्तमान में जितना देखने को मिलता है, वे सभी अपवाद हैं, ऐसा मान सकें वैसा नहीं हैं ?और इन समितिभंजक संयमी को श्रीनिशीथ पाठ के अनुसार मिथ्यात्वी मानना ही पड़ेगा।

(२) णिसा रात्री, ताए पढमे जो चरिमे वा जामे। चउक्कं णाम णिद्दा, णिद्दाणिद्दा, पयला, पयलापयला, आसेवणं णाम एतासु वट्टति । तत्थ से पत्तेगं पत्तेगं चउसु वि मसालहुं। सुवंताण य इमो दोसो, भगवता पडिसिद्धे काले सुवओ आणाभंगो कओ भवति, आणाभंगेण य चरणभंगो, जतो भणियं–आणाएच्चिय चरणं, तब्भंगे जाण किं न भग्गं तु । अणवत्थदोसो य, एगो पडिसिद्धिकाले सुवति, अण्णो वि तं दट्ठुं सुवति, उड्डाहो य भवति दिवसतो य सुवंतो दिट्ठो अस्संजएहिं, ते चिंतयंति "जहा एस णिक्खित्तसज्झायझाणजोगो सुवति, तहेव लक्खिज्जन्ति रातो रतिकलंतो",

एवं उड्ढाहो भणंति "णं कंमं ण धम्मो अहो सुव्वइत्तं" ।।

निशीथ गाथा- १३४ चूर्णि

अर्थ: रात्रि के प्रथम और अंतिम प्रहर में संयमी निद्रा, निद्रा निद्रा, प्रचला, या प्रचला प्रचला का सेवन करे, तो उन्हें हरेक में प्रायश्चित है।

नींद लेनेवालों के ये दोष हैं। भगवान के निषेध किये हुए काल में नींद लेनेवाले को आज्ञा भंग का दोष लगता है। आज्ञा भंग से चारित्र का विनाश होता है, क्योंकि कहा है कि "आज्ञा में ही चारित्र है, आज्ञा के भंग में क्या नहीं भंग हुआ?" और अनवस्था दोष लगा। एक संयमी प्रतिषीध्धि काल में नींद ले, उसे देखकर दुसरे भी नींद ले...जिनशासन की निंदा होती है। वो इस प्रकार कि –दिन में नींद लेनेवाले को संसारियों ने देखा, वे इस प्रकार बोलेंगे कि, 'कोई काम करना नहीं, कोई धर्म करना नहीं,....वाह! साधुता अच्छी है।'

- दिन में किसी भी समय नींद लेने की प्रभु ने स्पष्ट ना कही है। तथा रात्री में प्रथम–अंतिम प्रहर में भी प्रभु ने नींद लेने की स्पष्ट ना कही है।

इसमें बताये अनुसार ऐसा भावार्थ निकलता है कि जो संयमी दिन में नींद लेता है, जो संयमी रात्री के प्रथम–अंतिम प्रहर में नींद लेता है, वो संयमी चारित्र भ्रष्ट बनता है। (उदाहरण: अगर 6 से 6 बजे की रात होती है, तो 6 से 9 और सुबह 3 से 6 के बीच नींद लेनेवाला संयमी चारित्र भ्रष्ट ! उसे सुबह 3 बजे तो उठना ही पड़ता है।

दूसरी बात.... उनको नींद लेते देख, लोग निंदा करे, बहुत बुरी कल्पना करे, ये शासन की अवमानना है और अष्ट प्रकरण की गाथाओं में स्पष्ट दर्शाया गया है कि जो आत्मा अनजाने से भी शासन की अवमानना में निमित्त बने, वो दूसरों को मिथ्यात्व की ओर मोड़ता हुआ होने से वो भी मिथ्यात्वकर्म को बांधता है।

ये रही वो गाथाएं:

'य : शासनस्य मालिन्येऽनाभोगेनापि वर्तते ।
स तन्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येषां प्राणिनां ध्रुवम् ।
बध्नात्यपि तदेवालं परं संसारकारणम् ।
विपाकदारुणं घोरं सर्वानर्थनिबन्धनम् ।'

इसका सार यही है कि दिन में नींद लेनेवाला संयमी मिथ्यात्वी होता है।

(३) रातीभोयणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-दिवागहियं दिवाभुत्तं, पढमभंगो । दिया गहियं राओ भुत्तं एस बितीयभंगो, राओ गहियं दिया भुत्तं,राओ गहियं राओ भुत्तं ।।...

राओग्गहभोयणे तित्थयराणं आणातिक्कमो भवति, आणाभंगे य

चउगुरुं पच्छित्तं। 'आदि' गहणातो अणवत्थमिच्छन्ते जणयति।

निशीथ गाथा ११२ चूर्णी

अर्थ: रात्रि भोजन 4 प्रकार का कहा गया है। वो इस प्रकार है: कोई भी खाद्य पदार्थ (1) दिन में लिया हुआ, दिन में उपयोग किया गया (रात्रि में अपने पास रखा हुआ हो तो), (2) दिन में लिया हुआ, रात्रि में उपयोग किया गया, (3) रात्रि में लिया हुआ और दिन में उपयोग किया गया, (4) रात्रि में लिया हुआ रात्रि में ही उपयोग किया गया।

रात्रि को लिया गया और रात्रि में ही उपयोग किया गया हो तो तीर्थंकरों की आज्ञा भंग करनेवाला होता है.... अनवस्था और मिथ्यात्व उत्पन्न करनेवाला बनता है।

भावार्थ : चार प्रकार के आज्ञा भंग पर विचार करें

- आयुर्वेदिक या एलोपथिक कोई भी गोली गृहस्थ के पास दिन में वोहरी, रात भर अपने पास रखी और अगले दिन उसका उपयोग किया तो रात्रि भोजन का पहला आज्ञा भंग गिना जाएगा।
- ये गोलियां दिन में वोहरी हो और रात्रि में त्रिफला आदि के साथ उपयोग करें, तो दूसरा आज्ञा भंग...
- सूर्यास्त के बाद कोई व्यक्ति गोली देने आये, वो लेकर दुसरे दिन उसका उपयोग करे, वो तीसरा आज्ञा भंग...
- सूर्यास्त के बाद कोई व्यक्ति गोली देने आये, और तुरंत ही त्रिफलादि के साथ उपयोग में लेवें, ये चौथा आज्ञा भंग.....

उपरोक्त में से किसी भी प्रकार से जो संयमी रात्रि में उपयोग करे, वो मिथ्यात्वी !

यानि कि रात्रि में त्रिफलादि अनाहारी वस्तु उपयोग करनेवाला या रात्रि में त्रिफलादि अनाहारी वस्तु अपने पास रखकर दिन में उपयोग करनेवाला संयमी मिथ्यात्वी !

अभी तो बहुत सारे संयमियों के पास कोई ना कोई दवाई तो होती ही है, और वो दवाई वे अपने पास ही रखते हैं, सूर्यास्त के बाद भी लेते हैं, और दिन में तो लेते ही हैं...तो ये सभी संयमी मिथ्यात्वी !

नोट: अब के बाद पाठ नहीं दिया जाएगा, सिर्फ ऐसे पदार्थ ही दिए जाएंगे। जिनको भी पाठ देखने हो, वे संविग्न–गीतार्थों से संपर्क करें....उनको उचित लगेगा तो पाठ बताएँगे।

(4) **अर्थ:** नख–दांत को किसी भी प्रकार से छेदो, तो वो अनंतर छेदन ! कैंची आदि से छेद करो तो परम्पर छेदन। अनंतर या परम्पर किसी भी प्रकार से छेदन करनेवाला तीर्थंकर–गणधरों की आज्ञा भंग करता है। ऐसे आज्ञाभंग का प्रायश्चित आता है, तथा उसे छेदन करते देख

अन्य भी छेदन करे....ये अनवस्था ! उसमें भी प्रायश्चित आता है, और वो संयमी मिथ्यात्व उत्पन्न करता है।

भावार्थ : किसी का कोई लिफाफा आये और हाथ की उंगली से उसका छेदन कर अंदर से पत्र बाहर निकालते हैं, कभी कभी कैंची से छेदन–फाड़कर पत्र निकलते हैं।

- जो संयमी उंगली से या कैंची से लिफाफा फाड़े, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी पत्र पढ़ने के बाद हाथ की उंगली से उस पत्र के टुकड़े करे, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी कोई भी प्रकार का कपड़ा उंगली से या कैंची से फाड़े, वो मिथ्यात्वी !
- जो संयमी दांत से कपडा फाड़े, वो मिथ्यात्वी !

(5) **अर्थ:** भावप्रतिबद्ध उपाश्रय के 4भेद है।

- जहां स्त्रियों की एवम् साधुओं के मात्रु जाने की भूमि एक ही हो, वो प्रश्रवणप्रतिबद्ध !
- जहां स्त्रियों के रहने का स्थान हो, वो स्थान प्रतिबद्ध !
- जहां उपाश्रय में रहे हुए साधुओं को आसपास में स्त्री का रूप दिखाई दे, वो रूपप्रतिबद्ध !
- जहां रहे हुए साधुओं को स्त्री के शब्द, स्त्री के आभूषणों की आवाज...सुनायी देते हो, वो शब्द प्रतिबद्ध !

उपाश्रय के 4 भेद इस प्रकार है

1. द्रव्य से प्रतिबद्ध है, भाव से नहीं, 2. भाव से है, द्रव्य से नहीं, 3. द्रव्य से भी है और भाव से भी है, 4. द्रव्य से भी नहीं और भाव से भी नहीं।

भाव प्रतिबद्ध में रहनेवाले को चतुर्गुरु प्रायश्चित आता है, और आज्ञा भंग के दोष लगते हैं।

भावार्थ: शहरों के उपाश्रयों में, तीर्थस्थानों के उपाश्रयों में, छः री पालित संघों के तंबुओं में संयमियों को आसपास स्त्री रूप देखने की खूबसारी शक्यता! स्त्री के बातचीत के शब्द सुनने की भी बहुत भारी शक्यता !

यानि ऐसे स्थानों में रहनेवाले मिथ्यात्वी !

(आज्ञादि लिखा हो तो आज्ञा भंग, मिथ्यात्व, अनवस्था, विराधना, ये 4 समझ ही लेना और विराधना शब्द से आत्मविराधना और संयम विराधना समझें)

(जैसे साधुओं के लिए स्त्री रूप, स्त्री शब्द.....वैसे ही साध्वीजीयों के लिए पुरुष रूप और पुरुष शब्द समझना)

(6) संयमी जब उपाश्रयादि के आसपास चातुर्मास में यदि पानी जमा होता हो, तब चलने के लिये ईंट रखावे, अथवा सीमेंट से ही ऊंची जगह करा दे, जिससे आसपास पानी सरक जाए और सीमेंट वाले रास्ते पर चल सके....उपाश्रय में आने–जाने के रास्ते पर कीचड होता हो, तो

संयमी रेत–कंकड़ डलवा दे, जिससे उसके ऊपर से आसानी से चला जा सके, सीढीयां चढ़ने के लिए एक तरफ या दोनों तरफ मोटे रस्से बंधवाए, अथवा लकड़े –पत्थर के साधन लगवाये ...ये सब वो स्वयं करावे, या गृहस्थों ने संयमी के लिए किया हो, उसका उपयोग करने के लिए सहमति दे,.....तो संयमी को मिथ्यात्व दोष लगता है।

सार यही है कि (1) अगर संयमी रास्ता चलने के लिए कंकड़ डलवाये, ईंट रखावे, सीमेंट से कायमी रास्ता बनवाये.... गृहस्थ द्वारा बनवाये गए इन सभी का उपयोग अगर संयमी करे, तो संयमी मिथ्यात्वी !

(7) संयमी सुई आदि मांग कर लाये, और वो खो जाए–चोरी हो जाए....तो उसका मालिक गुस्सा करे, दूसरी बार न दे.... शायद कभी चोरी भी न हो, और खो भी न जाए, तो वापस मालिक को लौटा दे, और मालिक उसे धोये, क्योंकि अपवित्र (स्नानादि बिनाके) साधू ने उनका स्पर्श किया है, इससे पश्चातकर्म का दोष लगता है।

यानि निष्कारण मांगकर सुई लाने वाला संयमी मिथ्यात्वी बनता है।

(8) अब संयमियों के लिए पात्रा–तरपनी आदि बनायी जाती है, ये गृहस्थ ही बनाते हैं, और संयमी उनका उपयोग करते हैं....यानि ऐसे पात्रा–तरपनी का उपयोग करनेवाले संयमी मिथ्यात्वी!

(9) संयमी के पास डांडा होता है, जिसे गृहस्थ संयमी के लिए बनाता है, और संयमी अगर उसका उपयोग करे, तो वो डांडा का उपयोग करनेवाला मिथ्यात्वी!

(10) संयमी एरलडाइट से या स्टिक फास्ट से पात्रा आदि जोड़े, तो वो मिथ्यात्वी !

(11) एक पात्रा को तीन या ज्यादा जगह पर जोड़े तो संयमी मिथ्यात्वी!

(12) अब जो घड़ा उपयोग में आ रहा है, तो वो हुंड और दुष्पुत..दोनों अपलक्षण वाले हैं.....इसलिए घडे का उपयोग करने से चारित्र का विनाश होता है। अप्लक्षण वाले पात्रा का उपयोग करने से मिथ्यात्व का बताया ही गया है, यानि इतना तो कहना ही पड़ेगा कि...

जो संयमी घड़े का उपयोग करे वो मिथ्यात्वी!

(13) थैला आदि सिए हुए वस्त्र है, जिनको अप्लक्षणवाला बताया गया है, अतः जिस संयमी के पास थैला आदि हो, वो मिथ्यात्वी !

(14) बाम, अत्तर आदि किसी भी अचित्त वस्तु को सूंघे तो संयमी मिथ्यात्वी!

(15) ढेर सारे प्रकार लघु मृषावाद के हैं !

उदहारण के लिए वस्त्र या पात्रा (अपना न होने पर भी) जल्दी जल्दी में कह दे कि "मेरा है,

तेरा नहीं"

- जल्दी जल्दी में गाय को घोडा कह दे
- वस्त्रपात्रादि कोई वस्तु दूसरे संयमी लाये हो, फिर भी कह दे कि "मैं लाया हूँ,"
- रात्रि में अंधेरे के कारण ध्यान न रहने से दुसरे की जगह को "ये मेरी जगह है, ये मेरा संथारा है" ऐसा कहे,
- दुसरे किसी ने गृहस्थ को प्रतिबोध किया हो, और वो कहे "मैंने इसे प्रतिबोध किया है" किसी गृहस्थ को प्रतिबोध न होता हो, और वो कहे कि "मैं इसको अवश्य प्रतिबोध करुँगा..."
- भूतकाल , वर्त्तमान काल या भविष्य काल में जिस वस्तु के बारे में जानकारी नहीं, और निश्चिंत होकर कहे, 'ये ऐसा था–है–होगा'।

ऐसे तो दूसरे भी कई दृष्टान्त हैं!

इनमें से कोई भी मृषा संयमी बोले तो वो मिथ्यात्वी !

संक्षिप्त में मजाक या मस्करी में भी, हंसी– मजाक रूप में भी संयमी एकाध वाक्य बोले, तो मिथ्यात्वी !

(16) लघु चोरी के दृष्टान्त

- मालिक की आज्ञा लिए बिना उसकी जमीन(खेत, आदि) में लघुनीति–बडीनीति को परठना।
- मालिक की आज्ञा लिए बिना उसकी छोटी–बड़ी वस्तु ले,
- मालिक की आज्ञा लिए बिना उसकी भूमि पर थोड़े समय के लिए भी खड़ा रहे, पेड़ के नीचे बैठे, नींद ले।
- ऐसी किसी भी प्रकार की छोटी चोरी करे, तो वो संयमी मिथ्यात्वी !

मोटे तौर पर कहें तो एक संयमी दुसरे संयमी की बॉल पेन, डांडा, काम्बली आदि कोई भी चीज बिना पूछे ले, तो वो मिथ्यात्वी !

(17) जो संयमी लोच के बाद मुँह–सिर धोये, वो मिथ्यात्वी! जो संयमी गोचरी–वडनीति के सिवाय हाथ पैर धोये, वे मिथ्यात्वी !

(18) अब तो तल बगैर के मोज़े पहनने में आ रहे है, उनमें भी चींटी, आदि के मरने की संभावना रहती है। अतः तल बिना के मोज़े पहननेवाले संयमी भी मिथ्यात्वी !

(19) शास्त्रीय माप से भी बडे संथारा– उत्तरपटादि का उपयोग करनेवाले संयमी मिथ्यात्वी !

पशमीना आदि विशिष्ट काम्बली उपयोग करनेवाले संयमी मिथ्यात्वी !

एकदम सफ़ेद वस्त्र उपयोग करनेवाले संयमी मिथ्यात्वी !

(20) संयमी स्वजनको, मित्र को, भक्त को पात्रा लाने का काम सौंपे, वे पात्रा लावे, और संयमी वो पात्रा ले....वो संयमी मिथ्यात्वी ! (आजकल मोटे तौर पर गृहस्थों से ही संयमियों को पात्रा मंगाने पड़ते हैं)।

(21) संयमी शेषकाल में एक महीने से अधिक किसी भी जगह पर रुके, तो वो मिथ्यात्वी !

कार्तिक चौदस के बाद भी उसी जगह पर रहे (एक, दो, तीन दिन भी) तो वो मिथ्यात्वी !

(22) परिचित घरों में संयमी समय से पहले या समय के बाद गोचरी जाए तो मिथ्यात्वी !

(11.30 बजे का गोचरी काल होता है, और 10/11 बजे जाए, या 12.30/1.00 बजे जाए)

(23) जो संयमी गृहस्थ को साथ लेकर गोचरी वोहरने को जाए, वो मिथ्यात्वी !

(24) जो संयमी किसी भी गृहस्थ के साथ (उसे साथ लेकर) स्थण्डिल जाए, वो मिथ्यात्वी !

(25) जो संयमी किसी भी गृहस्थ को साथ लेकर एक गांव से दुसरे गांव विहार करे, वो मिथ्यात्वी !

(26) जो संयमी अच्छा पानी(प्रवाही)पिए, और खराब पानी(दुर्गन्ध वाला, स्वादहीन, बेस्वाद) परठ दे, तो वो संयमी मिथ्यात्वी !

(27) जो संयमी अच्छी अच्छी गोचरी उपयोग कर, स्वादहीन, बेस्वाद गोचरी को परठ दे....तो मिथ्यात्वी ! वैसे उसे बेस्वाद–दुर्गन्धवाली गोचरी पहले उपयोग में लेनी चाहिए और बाद में सुस्वाद वाली गोचरी !

(28) जो संयमी जरूरत से ज्यादा गोचरी वोहरे, तो वो मिथ्यात्वी! यानि गोचरी मांडली में गोचरी बच जाए, सभी परेशान होकर मुश्किल से उसे खपावे, या अंत में मुठ्ठसी करके दूसरी बार खानी पड़े, या परठनी पड़े....तो ऐसे गोचरी लानेवाला संयमी मिथ्यात्वी !

(29) सोचो कि गोचरी अधिक हो गयी, तो दुसरे उपाश्रय में, जिनके साथ गोचरी का व्यवहार हो, उनके पास जाकर उनको गोचरी की विनंती करना....पर ऐसा किये बिना ही गोचरी सीधे परठ दे, वो संयमी मिथ्यात्वी !

(30) जो संयमी 'यहाँ निवास करनेवाले कौन हैं?' ये पूछे बिना ही गोचरी वोहरने हेतु

निकल जाए, वो संयमी मिथ्यात्वी ! (निवास करनेवाले कौन है?उनका घर कहाँ है?....ये सब जानकारी लेने के बाद ही गोचरी जाना, पर ऐसा न करे तो मिथ्यात्वी)

(31) जो संयमी शेषकाल में पाट–पाटला–टेबल ग्रहण करे, उपयोग में लाये, वो मिथ्यात्वी ! (श्री गच्छाचार में तो आचार्य भगवंत भी जो पाट का उपयोग करे, तो उनको भी मिथ्यात्वी कहा गया है)

(32) किसी कारणवश शेषकाल में लिए हुए पाट–पाटलादी जो संयमी चातुर्मास में भी रखे, यानि कि चातुर्मास शुरू होने के पूर्व वो निकाल ना दे, तो वो मिथ्यात्वी !

(33) भले ही उपाश्रय की ज़मीन रत्न जड़ित हो, (यानि कि भेज आदि होने की संभावना न हो) तो भी चातुर्मास में जो भी संयमी पाट ना ले, ना उपयोग में ले, वो मिथ्यात्वी !

(34) जो संयमी चातुर्मास पूर्ण होने के बाद कार्तिक सुदी पूनम को ही गृहस्थ को पाट–पाटला ना सौंप दे, उपयोग करे, वो मिथ्यात्वी !

(35) जो संयमी मालिक को पाट–पाटला सौंपे बिना विहार कर दे, वो मिथ्यात्वी!

(36) जो संयमी संथारो–उत्तर पट्टो–कपडा–पात्रा–टोक्सा टोक्सि आदि छोटी बड़ी सभी उपधि(वस्तुओ) में से एकाध उपधि की भी पड़िलेहना ना करे, समयपर ना करे, अविधि से करे...वो मिथ्यात्वी ! इसका अर्थ यही है कि सूर्योदय के समय डांडा का पडिलेहन आता है, इस प्रकार सभी उपधि का पडिलेहन करना होता है, मगर जो समय से पहले पडिलेहन करे, तो वो संयमी मिथ्यात्वी! ऐसे प्रतिलेखन के अनेकानेक दोष दर्शाये गए हैं, इनमें से किसी भी दोष का सेवन करे, वो संयमी मिथ्यात्वी !

सुबह प्रतिलेखन का समय, पात्रा प्रतिलेखन का समय, शाम को उपधि–प्रतिलेखन का समय कई सारी जगहों पर छूट जाता है....और टोक्सि–डोरा–लूणा जैसी छोटी छोटी चीजों में से भी किसी न किसी का पडिलेहन तो रह जाता है...ऐसे उकडू बैठकर पडिलेहन करना, आदि बहुत सारी विधियों को कई जगहों पर नहीं कर पाते हैं। तो ऐसा कोई भी संयमी हो तो उसे मिथ्यात्वी जानना।

(37) बड़े जीमण में मालिक आज्ञा दे, संयमी जाए....और वस्तुओं को देख देख कर कहे कि "इसमें से लो, उसमें से लो", इस प्रकार से जो वोहरता है, वो मिथ्यात्वी ! आजकल छः री पालित संघ–नवाणुं–तपस्या–चातुर्मास के रसोड़े में ऐसा बनने की शक्यता है। संयमी वहां जाए, काउंटर पर रखी हुई वस्तुओं को देखे और अनुकूलता के अनुसात वोहरे...इसमें ऐसे तमाम संयमी मिथ्यात्वी साबित होते हैं।

(38) गृहस्थ संयमी को वोहराने हेतु घर से वस्तु उपाश्रय में लाये, अरे! संयमी जब घर

पर वोहरने गया था तब अंदर के कमरे से, संयमी की नज़र से परे की जगह से वस्तु बाहर लाये, और संयमी अगर वोहरे तो वो मिथ्यात्वी !

स्वजन या भक्त टिफिन लावे, विहारादि में भी इस तरह के टिफिन लावे, दुकानों से दवाइयां ले आवे.. संयमी ले और उपयोग करे, ऐसा कई बार देखने को मिलता है।(दवाइयों में तो विशेषकर) यानि ऐसा करनेवाले सभी संयमी मिथ्यात्वी !

(39) जो संयमी अपने पैर दबाये, वो मिथ्यात्वी !

(40) जो संयमी पैरों में घी–तेल आदि घिसे, मालिश करे, वो मिथ्यात्वी! (पाँव में कांसे के कटोरे से घी घिसे, बाम आयोडेक्स लगाने में आये...ये सभी इसी में गिने जायेंगे)

(41) जो संयमी अपने पैर अचित्त पानी से धोवे, वो मिथ्यात्वी! (सचित पानी तो दूर की बात)

(42) जो संयमी अपना मस्तक–हाथ आदि शरीर को प्रमार्जे(घिसे), वो मिथ्यात्वी ! (पसीना हो रहा हो तब, धुल उडी हो तब सहज रूप से मस्तक–हाथ आदि पर प्रमार्जन हो जाता है)।

(43) जो संयमी अपना मस्तक–हाथ आदि दबाये, वो मिथ्यात्वी !(सिर दुखे, यानि तुरंत सिर दबाने की क्रिया चालू हो जाए, वैसे पानी का घड़ा लाने के बाद या काप निकालने के बाद हाथ दर्द करता हो तो इसमें भी ऐसा ही कोई दोष समावेश हो जाए)

(44) जो संयमी अपने मस्तक–हाथ आदि शरीर पर तेल–घी (बाम आदि) घिसे, वो मिथ्यात्वी !

(45) जो संयमी अचित्त पानी से अपने मस्तक–हाथ आदि को धोये, वो मिथ्यात्वी !

(46) जो संयमी शरीर पर हुए फोड़े–घाव को(परू निकालने के लिए) दबाता है, वो मिथ्यात्वी !

(47) जो संयमी फोड़े–घाव पर घी–तेल(सोफ्रामैसिन आदि लेप) लगावे, वो मिथ्यात्वी! संयमी फोड़े–घाव आदि पर ट्यूब आदि लगाते ही हैं। वैसे कहीं जल गए हो तो उसपर बरनोल–घी आदि लगाना पड़ता ही है....तो जो ऐसा करे वो मिथ्यात्वी !

(48) जो संयमी फोड़े–घाव आदि को अचित पानी से धोये, वो मिथ्यात्वी ! (फोड़े–घाव को पानी–डेटोल आदि से भी धोना पड़ता है)

(49) जो संयमी उंगली से दांत घिसे, वो मिथ्यात्वी !

(50) जो संयमी दन्त काष्ट से(ब्रश से) दांत साफ करे, वो मिथ्यात्वी !

(51) जो संयमी होंठ पर घी–वेसलीन आदि लगावे, वो मिथ्यात्वी !

(52) जो संयमी अपनी आँखों को घिसे–सहलाये, वो मिथ्यात्वी !

(53) जो संयमी अपनी आँखों में नेत्रप्रभादि दवाई डाले, वो मिथ्यात्वी !

(54) जो संयमी अपनी आँखों को अचित पानी से धोये, वो मिथ्यात्वी !

(55) जो संयमी पसीने को पोंछे–पसीना दूर करे, वो मिथ्यात्वी !

(56) जो संयमी कान का मेल निकाले (साफ़ करे), वो मिथ्यात्वी !

(57) जो संयमी आँख के गींद आदि को निकाले, वो मिथ्यात्वी !

(58) जो संयमी दांत के मैल को निकाले, वो मिथ्यात्वी !

(59) जो संयमी नख के मैल को निकाले, वो मिथ्यात्वी !

(60) जो संयमी शरीर पर सूख गए अथवा गीले मैल को दूर करे, वो मिथ्यात्वी !

(61) जो संयमी विहार में गर्मी आदि से बचने के लिए मस्तक ढंकता है। (वरघोड़े में कई बार संयमियों के मस्तक ऊपर कपडा रखकर श्रावक खड़े रहते है...कपडा मस्तक को छूता नहीं....फिर भी उसमे दोष तो रहता ही है ना) वो मिथ्यात्वी !

(62) जो संयमी प्याले में मात्रु या स्थण्डिल जाए, वो मिथ्यात्वी !(अब तो एक भी संयमी ऐसा नहीं होगा कि जिसको प्याले में मात्रु करना नहीं पड़ता हो, और ऐसा ही स्थण्डिल के लिए भी समझें। इस दृष्टि से ये सब भी मिथ्यात्वी !)

(63) जो संयमी सूर्योदय पूर्व स्थण्डिल परठने जाए, वो मिथ्यात्वी ! (अब बहुत सारे संयमी सूर्योदय पूर्व स्थण्डिल परठके आ जाते हैं। जो वाडा का उपयोग करते हैं, उनका तो दोष बडा ही है...यानि ये सब भी मिथ्यात्वी !)

(64) जो संयमी जोग में ना हो, और बिना वजह के दूध–दही–घी आदि विगई का उपयोग करे, या कोई कारण हो तो भी बिना गुरु से पूछे बिना के उपयोग करे, अथवा कोई कारण भी हो, और गुरु को पुछा भी हो, मगर गुरु ने आज्ञा नहीं दी हो, और फिर भी उपयोग करे....तो वो संयमी मिथ्यात्वी !

वर्त्तमान में तो बहुत सारे संयमी रोज दूध का उपयोग करते है। खाखरा कोरा मिलते हो तो भी उस पर घी चुपड़वा कर उपयोग में लेते हैं। इस प्रकार रोज रोज विगई का उपयोग चालू ही है। और अगर वे विगई का उपयोग ना करे तो भी मर जायेंगे या भयंकर बीमार पड़ जाएंगे, ऐसा भी नहीं होता है। सप्ताह में एक दो बार उपयोग में लावे तो भी चलता है...फिर भी रोज उपयोग करते हैं....तो ऐसे सभी संयमी मिथ्यात्वी!

(65) जो संयमी उपाश्रय से सटे हुए 7 घरों में गोचरी जाते हैं, वो मिथ्यात्वी ! (उपाश्रय के बाद 1–2–3–4–5–6–7 घरों में गोचरी नहीं जाना चाहिए....आजकल ऐसे नजदीक के

घरों में गोचरी जानेवाले बहुत है, ...तो ये सभी मिथ्यात्वी !)

(66) जो संयमी गोचरी उपयोग करते समय पात्रा में दाल–भात, रोटी–सब्जी, दूध–घी, आदि कोई भी खाद्य पदार्थ इकट्ठा करे (मिश्रण करके), वो मिथ्यात्वी !

(67) जो संयमी वापरने के समय हाथ में कोई भी दो खाद्य पदार्थ मिश्रण करे (हाथ में खाखरा लेने के बाद उसपर मेथी का मसाला लगावे, या हाथ में सूंठ लेने के बाद उसमें बलवण मिलावे....ऐसा कुछ भी करे)वो मिथ्यात्वी !

(68) जो संयमी वापरने के समय मुँह में कोई भी द्रव्यों का मिश्रण करे (मुँह में खाखरा रखने के बाद दूध–चाय पिए, मुँह में रोटी रखने के बाद ऊपर दाल पिए...ऐसा ऐसा कुछ भी करे) वो संयमी मिथ्यात्वी !

(69) जो संयमी गोचरी वोहरते समय दूध में शक्कर डलावे, खाखरे के ऊपर घी चुपडावे, इसी प्रकार कोई भी वस्तु वोहरते समय मिश्रण करावे, वो संयमी मिथ्यात्वी ! (पहले से ही शक्कर वाला दूध मिले या चुपड़े हुए खाखरे मिले, तो ये उसमे नहीं गिने जाएंगे)

(70) जो संयमी कुछ देखकर, या सुनकर, या कुछ याद करके खिलखिलाकर हँसे, वो संयमी मिथ्यात्वी! (जिन जिन प्रसंगों में संयमीयों को भी हंसना आना स्वाभाविक है, और वो याद नहीं होता, पर हास्य होता है, उसमें संयमी को मिथ्यात्वी माना है)

(71) जो संयमी सूर्यास्त से लगभग 48 मिनट पूर्व मात्रु अथवा स्थण्डिल परठने की जगह नहीं देखे ....वो मिथ्यात्वी !

रात्रि में जहां लघुनीति या वडनीति परठनी होती है, उस जगह पर चींटियों का दर तो नहीं है? ये सब सूर्यास्त के 48 मिनट पूर्व देखना चाहिए और वो भी रोज रोज ! आजकल ऐसा देखनेवाले कम ही लगते हैं। जो जो संयमी देखते हैं , वे सूर्यास्त के 48 मिनट पहले नहीं देखते, परंतु सूर्यास्त के आसपास ही देखते हैं। अतः ऐसा करनेवाले सभी संयमी मिथ्यात्वी माने जाते हैं।

पाठक फिर से ध्यान में लेवें ...

शास्त्रकार भगवंत संक्षिप्त में **"आणादिया"** दोसा लिखे, तो समझ लेना कि आज्ञा (=आज्ञा भंग और आदि शब्द से अनवस्था, मिथ्यात्व, विराधना जैसे दोष भी लगते हैं।

इस प्रकार हमको कहाँ कहाँ मिथ्यात्व लगता है, इसके 71 स्थान हमने देख लिए.....

2. क्या जैन शासन का विच्छेद हो गया है?

शास्त्र वचन है कि **'ण तित्थं विणा णियंठेहिं'** साधुओं–साध्वीजीयों के बिना तीर्थ–शासन नहीं होता है।

यहां साधु यानि कि सच्चा साधु यानि की छट्ठे गुण स्थानक के मालिक। ये तो हमको मान्य ही है ना? क्योंकि सिर्फ वेषधारी साधु तो अभव्य भी हो सकते हैं, और उनकी उपस्थिति से शासन की हाजिरी तो हम मान ही नहीं सकते।

अतः सार ये आता है कि...

जो 21000 वर्ष तक शासन चलनेवाला है, तो उसका मतलब यही है कि 21000 वर्ष तक सच्चे संयमी बिराजमान ही रहेंगे।

पर उपर दिए गए 71 पाठ अगर देखें तो हमको ये मानना पड़ेगा कि ये सब मिथ्यात्वी ही है। यानि कि वर्त्तमान में अब एक भी सच्चा संयमी नहीं है। इसलिए अभी से ये मानना पड़ेगा कि जैन शासन का विच्छेद हो गया है।

प्रश्न : देखो भाई! भरत क्षेत्र बहुत बड़ा है, अपना वर्त्तमान का विश्व तो बहुत ही छोटा है, इसलिए ये संभावना पक्की है कि अगर यहां शासन का विच्छेद हो गया हो, तो दुसरे भाग में तो शासन हो ही सकता है...

उत्तर : यानि, आपका ये कहना है कि शासन तो है ही, मगर ये वर्त्तमान के दिखते विश्व में नहीं, बल्कि इसके सिवाय के भरत क्षेत्र में ! यानि कि आप वर्त्तमान में विद्यमान ऐसे 10000 संयमियों को तो सिर्फ वेषधारी मिथ्यात्वी ही मानते हो ना? क्या ये बात कोई भी व्यक्ति मानने को तैयार होगा? अरे! उल्टा, शास्त्रों में तो ऐसा ही कहा गया है कि "जो ऐसा कहता है कि वर्त्तमान में चारित्र नहीं, शासन नहीं, .. उसे संघ से बाहर करना चाहिए।" कहीं भी ये स्वीकार किया हुआ नहीं है कि

"वर्तमान में यहाँ चारित्र नहीं है...बाकी सब जगह है।"

अतः आपकी ये बात तो उचित नहीं।

देखे गुरुत्त्वविनिश्चय का पाठ:

इदानीं तात्त्विकश्रमणानभ्युपगमे च द्विविधसंघस्यैव प्रसंगः, तात्त्विकश्रावकानभ्युपगमे च मूलत एव तद्विलोपः, सम्यक्त्वस्यापि साधुसमीपे ग्राह्यत्वेन तदभावे तस्याप्यभाव इति सर्वं कल्पनामात्रं स्यात्।।

गाथा २०६ उल्लास १

अर्थ: इस काल में जो सच्चा साधु है, ऐसा नहीं मानें, तो सिर्फ श्रावक–श्राविका ऐसे दो प्रकार के संघ को मानने की आपत्ति आये और सही मायने में सम्यक्त्व तो साधु के पास से ही लिया जाना है, तो साधु के अभाव में सम्यक्त्व का भी अभाव हो जाए। इस प्रकार तो सच्चे श्रावक–श्राविका भी नहीं माने जाएंगे, अतः मूल से ही शासन विच्छेद होता है। (इसलिए इस काल में भी सच्चे साधू है, ऐसा तो मानना ही पड़ेगा)

प्रश्न : इसमें ऐसा भी तो मान सकते हैं कि जब भी कोई संयमी किसी दोष का सेवन करता हो तभी वो मिथ्यात्वी ! उस समय दुसरे कोई संयमी दोष सेवन न कर रहे हो तो सम्यक्त्वी ! अब जब भी वो सम्यक्त्वी कोई दोष सेवन करे,और जो वो मिथ्यात्वी संयमी दोष सेवन करना बन्द हो गया हो, तो वो सम्यक्त्वी बन गया समझो ! इस प्रकार कोई ना कोई संयमी तो सम्यक्त्वी गिना ही जाएगा। यानि शासन चलता रहेगा। और ऐसा बन सकता है, क्योंकि गुण स्थानक तो आवागमन करते ही रहते हैं।

उत्तर : वाह रे वाह ! आप तो बड़ी अच्छी कल्पना करते हैं, यानि आपके हिसाब से तो जब भी कोई संयमी कोई दोष सेवन कर रहा हो, तो उसे उस समय मिथ्यात्वी ही मानना?

यानि कि

- विहार करते करते कोई भी संयमी अन्य संयमी के साथ या गृहस्थ के साथ अच्छी भी बातें करता हो तो, वो मिथ्यात्वी ही ना?अवन्दनीय ही ना!
- स्वयं आचार्य भी शेषकाल में जब पाट पर बैठे होते है, तब मिथ्यात्वी और अवन्दनीय ना?
- जिस प्रवचनकार ने देशना के समय जितने समय के लिए मुहपत्ति का उपयोग नहीं किया हो, वो प्रवचनकार उतने समय तक मिथ्यात्वी और अवन्दनीय हुआ ना?

अरे, भाग्यशाली ! सिर्फ ऊपर के 71 मुद्दे याद करोगे ना, और अभी आपने जो कही बात याद करोगे ना, तो उसका जो भावार्थ निकलता है, वो आपको तो ठीक, अन्य किसीको भी मान्य नहीं होगा।

सही हकीकत तो ये है कि दोष न सेवन करने के काल में भी दोषों के संस्कार तो विद्यमान होते ही है, तो ये गुण स्थानक को तोड़–फोड़ देते ही हैं, नहीं तो जब महाशिथिल–यथाचन्द–उत्सुकप्ररूपक सो जाए तब कोई महाशिथिलता–उत्सुकप्ररूपना का आचरण करते नहीं...अरे, जागृतदशा में भी दोषरहित जीवन जीते हैं, फिर भी उनको तब सच्चा साधु नहीं माना... क्योंकि अवसर आने पर ही महाशिथिलादी दोष सेवन करने के उनके संस्कार तो यथावत थे....

ऐसे प्रकट में भी जिनके संस्कार ही इर्यासमिति में अतिचारों के सेवन का, मुहपत्ति का उपयोग न रखना हो....उनसे बीच बीच में दोष सेवन न हो, इतने मात्र से उनमें सच्ची साधुता आ जाए....ऐसा तो बनता नहीं।

इसलिए ऐसा तो मेहरबानी करके विचारें नहीं....

प्रश्न: तो फिर क्या किया जाए ?आप ही कहो। शास्त्रपाठों के हिसाब से सभी संयमी मिथ्यात्वी साबित होते हैं, और शास्त्रपाठों के हिसाब से ही उनको सच्चे साधु भी मानना है....ये तो बड़ा ही मुश्किल काम है। आप ही समाधान ढूंढ लीजिये...

उत्तर: सभी समाधान मिलेंगे ही । मगर इतना तो पहले दृढ़ तरीके से मान लो कि जैन शासन का और सच्ची साधुता का विच्छेद हुआ ही नहीं। शास्त्रों में जो मिथ्यात्व दिखाया गया हैं, ये पहले गुण स्थानरूप मिथ्यात्व तो नहीं ही, मगर कोई अन्य प्रकार का मिथ्यात्व ही है। और ये क्या है? यही हमको खोजना है। हमको क्या ढूंढना है? हमको तो जो शास्त्रों में बताया गया है, उसे ही हमको मानना है, विचार करना है, आचरण में लाना है।

(१) इत्थं च अन्यतरस्थानभंगेऽपि निश्चयेन भंगोक्तिर्नानुपपन्ना, केवलं तत्कालमावृत्तस्य पुनःसंघट्टनम्, अन्यथा तु तदवस्थ एव भंग इत्याह-

जो पुण पमायदोसो थोवो वि हु णिच्छएण सो भंगो । सम्ममणाउट्टस्स उ, अवगरिसो संजमम्मि जओ ।।८२।। यः पुनः स्तोकोऽपि प्रमाददोषः, स निश्चयेन भंगः । सम्यगनावृत्तस्य तु स भंग उत्तरकालमवतिष्ठते इति शेषः, यतः यस्मात् 'संयमे' चारित्रे 'अपकर्षः' अधस्तनस्थानसंक्रमलक्षण : ।।८१।।

गुरुतत्त्वविनिश्चय

अर्थ: इस प्रकार कोई एक संयम स्थान का भंग होता है, फिर भी निश्चय जो ये कहे कि चारित्र का ही भंग हुआ है तो ये गलत नहीं। सिर्फ इतना ही कि अगर कल को वो जीव जो पाप का पश्चातापादि कर वापस आये, तो फिर वो खोया हुआ संयम स्थान उसे फिर मिले, नहीं तो वो भंग ऐसा का ऐसा ही रहेगा।

इसी बात को 82वीं गाथा में कही है।

* जो थोड़ा भी प्रमाद दोष है, वो निश्चय से भंग है, जो सही तरीके से वापस नहीं मुड़ता, जो चारित्रभंग के बाद के काल में भी चालू रहता है , क्योंकि चारित्र में नीचे के स्थान में जाने को अपकर्ष माना गया है।

भावार्थ : ये पाठ महत्त्व का है। इसको समझने के लिए कितनी ही सामान्य बातों को समझ लें।

- जो आत्माएं छठे गुण स्थानक पर रही हुई है, उन सभी के अध्यवसाय समान नहीं होते हैं, अलग अलग होते हैं।
- एक 300 मंज़िल का मकान! इसमें कोई पहली मंजिल पर, कोई दूसरी मंजिल पर, कोई तीसरी...कोई 300 वीं मंज़िल पर! पर सभी एक ही मकान में रहनेवाले कहलायेंगे ना?
- इस प्रकार चारित्र–संयमश्रेणी ये एक मकान है। इसमें छोटे से छोटा अध्यवसाय वो पहली मंजिल इससे थोड़ा सा भी अच्छा अध्यवसाय यानि दूसरी मंज़िल! ऐसे असंख्य अध्यवसाय हैं। इसमें से कोई भी अध्यवसाय वाला जीव उस चारित्र में ही है, संयम श्रेणी में ही है।
- मानलो कि 500 नंबर के संयम परिणाम के ऊपर कोई जीव है। और वो मुहपत्ति का उपयोग रखने में प्रमाद करता है, तो उसी क्षण वो 495 नंबर के संयम परिणाम पर आ जाता है।और वो उसका संयम स्थान से पतन कहा जाता है।
- मानलो कि हम 1 करोड़ अध्यवसाय मानते हैं, तो ऐसा कहा जाएगा कि 1 करोड़ संयम स्थान है। (एक मकान में 300 मंज़िल है) ये 1 करोड़ अध्यवसायों का समूह यानि संयम श्रेणी। इसमें कोई भी अध्यवसाय यानि संयम स्थान।
- मुहपत्ति का उपयोग जो प्रमाद से चूका, तो 500 नंबर से 495 नंबर पर आ गया। वो आत्मा संयम स्थान से चूका, पर संयम श्रेणी नहीं चूका। वो 5 संयम स्थान नीचे आया, पर संयम श्रेणी तो यथावत। यानि कि वो छठे गुण स्थान पर ही है। सिर्फ उसमे कमज़ोर हो गया है।
- अब उस परिस्थिति को निश्चयनय और व्यवहार नय भिन्न भिन्न तरीके से पहचानते हैं।

निश्चयनय को पूछो कि 'इस आत्मा के बारे में तुम क्या कहोगे?' तो उसका अभिप्राय यह होगा कि 'इसके चारित्र का विनाश हुआ।'

वो कहेगा कि ' मैं मानता हूँ कि वो 495 नंबर पर है। मगर मेरी मान्यता स्पष्ट ही है कि एक संयम स्थान भी खो जाए तो वो तत्काल ही चारित्र से तो भ्रष्ट हो ही रहा है! बाद में पश्चाताप करके पुनः 500 नंबर पर आता है या उससे ऊपर भी चढ़ता है तो मैं कहूंगा कि वो चारित्र प्राप्त कर रहा है'।

इस प्रकार निश्चयनय का मत ऐसा है कि ' संयम स्थान का भंग वो चारित्र का भंग !'

यानि शास्त्र सैंकड़ों जगह जो 'मिथ्यात्व मिथ्यात्व' बताया है, वो निश्चयनय के आधार पर बताया गया है... ऐसा मानना उचित लगता है।

दिन में नींद ले, चलते हुए बातें करे, स्थापनादि दोषों का सेवन करे, उपाश्रय में सफाई–

पोता करावे...आदि प्रत्येक प्रमाद में वो संयमी चारित्रस्थान से पतन पाता है। चारित्र श्रेणी से पतन नहीं, मगर फिर भी निश्चयनय के अनुसार उस आत्मा को चारित्र भ्रष्ट ही गिना जाएगा।

प्रश्न : सामान्तया हम मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, देश चारित्र, सर्व चारित्र ऐसे 4 भेद करते हैं, तो चारित्र का भंग जब हो, तब सीधे मिथ्यात्व ही थोड़े आता है? सम्यक्तव या देश विरति भी मान सकते है ना?

तो निश्चयनय ऐसा क्यों कहता है कि ' जो चारित्र भ्रष्ट वो मिथ्यात्वी '! चारित्र भ्रष्ट तो सम्यक्तवी या देश चारित्री भी हो सकता है।

उत्तर: हम निश्चयनय के आधार पर ही बात कर रहे है ना? तो आचारांग सूत्र का ये वचन कैसे भूल गए।

"जं सम्मं ति पासहा, तं मोणं ति पासहा !

जं मोणं ति पासहा, तं सम्मं ति पासहा !!"

जो सम्यक्त्व है, वोही मुनिपना है, जो मुनिपना है वो ही सम्यक्त्व है।

देखिये,

महोपाध्यायजी ने 125 गाथाओं में यही बात की है।

"लोकसार अध्ययन में समकित मुनिभावे, मुनिभावे समकित कहा, निज शुद्ध स्वभावे ..."

अब निश्चयनय के मत से तो एक भी संयम स्थान नीचे उतरने में आता है यानि चारित्र गया....और वो निश्चय नय चारित्र और सम्यक्त्व को एक ही मानता है।

यानि उसके मत से सम्यक्त्व भी गया, इसलिए जहां चारित्र का भंग, वहां निश्चय नय के मत से सीधे मिथ्यात्व बताया गया, तो वो सही ही है।

मगर उसका मतलब तो यही हुआ कि यहां मिथ्यात्व यानि पहला गुण स्थान, ऐसा नहीं। यहां मिथ्यात्व यानि छठा गुण स्थानक भी हो सकता है। एक संयम स्थान नीचे उतरो तो भी आप मिथ्यात्वी, भले ही आप छठे गुण स्थान पर ही हो...

ये पूरा निश्चयनय है।

देखिये, आचारंग लोकसार अध्ययन (पांचवां अध्ययन)– तीसरे उद्देश्य के अंतिम सूत्र की टीका भी देख लें।

जं सम्मं ति पासहा, तं मोणं ति पासहा।

टीका : सम्यगिति सम्यग्ज्ञानं,सम्यक्त्वं वा तत्सहचरितं, अनयोः सहभावादेकग्रहणे द्वितीयग्रहणं न्याय्यं, यदिदं सम्यग्ज्ञानं सम्यक्त्वं वा इत्येतत्पश्यत, तत् मुनेर्भावो मौनं-संयमानुष्ठानं इत्येतत्पश्यत । यच्च मौनमित्येतत्पश्यत, तत्सम्यग्ज्ञानं नैश्चयिकसम्यक्त्वं वा पश्यत । सम्यक्त्वज्ञानचरणानामेकताऽध्यवसेयेति भावार्थ : ।

भावार्थ: सूत्र में लिखे गये सम्यग शब्द को सम्यग् ज्ञान समझना अथवा सम्यग ज्ञान के साथ रहनेवाला सम्यग दर्शन समझना। ये दोनों एक साथ ही रहते हैं। जिससे एक के ग्रहण में दूसरे का ग्रहण योग्य ही है।जो ये सम्यग ज्ञान या सम्यग दर्शन आप देखते हो (मानते हो) उसे ही संयम अनुष्ठान देखें (मानें)....और जिसे आप मुनिपना मानते हो, उसे ही आप सम्यग् ज्ञान या नैश्चयीक सम्यक्त्व मानें.....

सार ये हैं कि सम्यग दर्शन सम्यग ज्ञान, सम्यक चारित्र सब को एक ही मानें।

(1) चारित्र वो निश्चय सम्यक्तव है...(नैश्चयिकसम्यकत्वं ऐसा विशेष रूप से लिखा है)

(2) सम्यग् दर्शन और सम्यग् चारित्र एक ही है ।

यानि फिर से ध्यान में लें ।

प्रमाद से मुहपत्ति का अनुपयोगादी कोई भी दोष यानि संयम स्थान से नीचे उतरना.....

संयम स्थान से नीचे उतरो, यानि भले ही आप संयम स्थान में ही हो, फिर भी (निश्चयनय से) चारित्र का पतन.....

चारित्र का पतन यानि सम्यक्त्व का पतन (निश्चयनय से) सम्यक्त्व का पतन यानि निश्चय से मिथ्यात्वी !

अर्थात्

प्रमाद से मुहपत्ति का उपयोग चूकनेवाला संयमी छठे गुण स्थान पर होने के बावजूद निश्चयनय से मिथ्यात्वी है ।

प्रश्न: इसका मतलब? आप क्या साबित करना चाहते है ?

उत्तर: ये आपको ख्याल आ ही गया होगा कि शास्त्र में जो दर्शाया गया है कि ' तिथि की सच्ची आराधना नहीं करनेवाला मिथ्यात्वी '! वो निश्चयनय से मिथ्यात्वी है। और इतने मात्र से वो पहले गुण ठाणा वाला नहीं बनता है। और होगा तो छठे पर ही। और इसीलिए वो तिथि की आराधना की भूल करने मात्र से अवन्दनीय भी नहीं बनता।

जो बने,तो

मुहपत्ति का उपयोग रखे बिना नहीं बोले, वो भी मिथ्यात्वी(निश्चय से) ही है।

चलते चलते बातें करनेवाला भी मिथ्यात्वी है....

शेषकाल में पाट का उपयोग करनेवाला भी मिथ्यात्वी है.....

ऐसी 71 बातें तो बता ही दी है। तो इन सबको अवन्दनीय मानना पड़ेगा।

जैसे कोई डायबीटीज़ से मरता है, कोई अटैक से, कोई बी पी से, कोई कैंसर से, कोई अचानक ही मरता है...पर मृत्यु तो मृत्यु ही है। और इन सब को अग्नि के सुपुर्द तो किया जाता है।

ऐसे कोई तिथि की गलत आराधना से मिथ्यात्वी, कोई मुहपत्ति का उपायोग नहीं रखने से मिथ्यात्वी, कोई दिन में 10 मिनिट भी नींद लेने से मिथ्यात्वी, कोई विहार में चलते समय स्वाध्याय करे तो भी मिथ्यात्वी...

कोई शेष काल में पाट का उपयोग करने पर मिथ्यात्वी...पर मिथ्यात्वी तो सब ही है ना...और सभी अवन्दनीय! सभी शासन के बाहर! सभी संघ से बाहर !

जो ये मान्य न हो,(और मान्य है भी नहीं) और मुहपत्ति के अनुपयोग आदि छोटे मोटे दोषवाले भी सच्चे साधू के समान, वंदनीय योग्य मान्य हो....तो तिथि के बाबत भी यही विचार क्यों नहीं किया जाता? शास्त्र पाठ तो सभी जगह समान ही लगता है ना? यानि कि तिथि के बाबत एकतिथि पक्ष या दो तिथि पक्ष जो कोई भी गलत करते होंगे, तो वे इतने प्रमाद मात्र से सम्पूर्णतया अवन्दनीय कक्षा के मिथ्यात्वी तो नहीं बनते है ना?

और भी आगे शास्त्र पाठ देखते हैं....

व्यवहारनयाभिप्रायेण तु यत्किञ्चिदल्पगुणभंगानुवृत्तावपि चारित्रस्य भंगस्तन्मते देशभंगेऽपि चारित्रानुवृत्तेः, सर्वभंगस्य श्रेणिपातरूपत्वाद्....

गुरुतत्व वि.- प्रथमोल्लास गाथा ८३

भावार्थ: व्यवहारनय का अभिप्राय इस प्रकार है कि जो भी अल्प गुण का भंग हो, और वो चालू रहता है (यानि की फिर से ऊपर चढ़ने का न हो) तो भी चारित्र का पतन नहीं होता। क्योंकि देश से चारित्र का पतन होने पर भी, सर्व से तो चारित्र वहां चालू रहता ही है। सर्व से चारित्र भंग तो तब होता है जब पूरी की पूरी श्रेणी में से ही बाहर निकल जाए।

आशय ये है कि 500 वें संयम स्थान से 495 पर आये, तो भी चारित्र है।

और भी नीचे उतरे और 300-200-100-50-25 पर आये, तो भी चारित्र है। अरे 1 नंबर के सबसे जघन्य संयम स्थान पर आये, तो भी चारित्र तो है ही। ये सब चारित्र भंग देश से चारित्र भंग कहलाते हैं।

जब नंबर 1 से भी नीचे उतरे, यानि कि छठा गुण स्थानक ही चला जाए, तब ही उसके चारित्र का भंग कहा जाएगा।

ऐसे शास्त्रों में दर्शाये गए सैंकड़ों दोषों में जो मिथ्यात्व है, वो निश्चय से ही है। व्यवहार से तो वहां सिर्फ अतिचार ही है। और चारित्र तो यथावत ही है।

अब हम ये देखते है कि

संयम स्थान से पतन कहाँ? और संयम श्रेणी से पतन कहाँ?

यानि कि चारित्र का देश पतन कहाँ? और चारित्र का सर्व पतन कहाँ?

इसका पाठ इस प्रकार है।

अथ कियत्प्रायश्चित्तापत्तौ संयमः स्यान्न वा ? इत्याह...छेदस्य-छेदप्रायश्चित्तस्य यावद्दानं तावेदकमपि व्रतं नातिक्रमेत्।
मूलेन-मूलप्रायश्चित्तेनैकं व्रतमतिक्रमंश्च पंचाप्यतिक्रमेत्।

गुरुतत्व वि.प्रथमोल्लास गाथा १००

भावार्थ: जो पाप का प्रायश्चित शास्त्र में अन्त तक बतलाया हुआ है, उस पाप में चारित्र पतन नहीं होता...जिस पाप का प्रायश्चित शास्त्र में मूल से बताया गया है, उस पाप में चारित्र का पतन होता है।

उदाहरण : मुहपत्ति का उपयोग न रखा, तो उसका प्रायश्चित क्या? मानो कि बियासना। तो इसका अर्थ ये कि इस दोष का सेवन हुआ, तो भी चारित्र खत्म नहीं होता, सिर्फ उसमें थोड़ी कमी आये...

ऐसे दिन में थोड़े सोये,तो उसका प्रायश्चित क्या? मानो की बियासना ! तो इसका मतलब भी ऊपर मुजब ही समझना कि चारित्र तो टिका ही। सिर्फ थोड़ा कम।

ऐसे ही तिथि की बराबर आराधना नहीं की, तो इसका प्रायश्चित क्या ? मानो कि एकासणा–आयंबिल–उपवास...आदि। तो इसका मतलब भी यही कि इससे कोई चारित्र खत्म नहीं होता। सिर्फ थोड़ा घाव लगता है...अब चारित्र है, यानि सम्यक्तव आदि तो है ही।

हाँ! जो ऐसा शास्त्र पाठ हो कि जिसमें ' तिथि की सच्ची आराधना ना करे, उसे मूल प्रायश्चित!' तो ये साबित होगा कि तिथि की सच्ची आराधना नहीं करनेवाली आत्मा चारित्र से सम्पूर्णतया भ्रष्ट !

पर ऐसा पाठ अभी तक मिला नहीं। (हाँ ! मैंने अभी कोई सभी शास्त्र तो पढ़े हैं नहीं, इसलिए ऐसा पाठ कहीं पर हो भी सकता है...पर जितना मैंने पढ़ा है, उसमे तो ऐसा कोई पाठ मेरी जानकारी में आया नहीं। जिसको भी ऐसा पाठ जानकारी में आये, वो कृपया कर मुझे अवगत करावें)

इससे एक बात और भी समझ लीजिए कि

जिन शास्त्रों में जहां सैंकड़ों स्थानों में मिथ्यात्व बतलाया गया है,

उन्हीं शास्त्रों में उन्हीं सैंकड़ों स्थानों में प्रायश्चित हेतु मासलघु आदि देखने को मिलते हैं। पर उनमें भी मूल प्रायश्चित नहीं बताया गया है।

इर्यासमिति में भूल करे तो मूल से नहीं, बल्कि मिथ्यात्व बताया।

मुहपत्ति का उपयोग ना रखे तो, मूल से नहीं बताया, पर मिथ्यात्व बताया।

दिन में थोड़ा सा भी सोये तो मूल नहीं बताया, पर मिथ्यात्व बताया...

तो ये कैसे तर्क संगत होगा?

एक तरफ प्रस्तुत शास्त्र पाठ कहते है कि जब तक मूल प्रायश्चित न आये, अन्त तक भी प्रायश्चित न आये, तब तक के पापों में ये आत्मा सच्चा साधु ही है। सिर्फ सामान्य दोष लगता है... दूसरी तरफ वहां अन्य शास्त्रों के पाठ मिथ्यात्व बताते हैं। यानि ये प्रश्न खड़ा हुआ है कि यहाँ छठा गुण स्थानमिथ्यात्व दोनों साथ साथ बताये गए हैं, सही ना?

देखिये... दिन में जरा भी नींद ले, तो मानो कि एकासने का प्रायश्चित है (मूल तो नहीं है ना) तो इसका मतलब यही है कि वो नींद लेनेवाला छठे गुण ठाणा वाला ही है, सिर्फ नींद लेने के कारण चारित्र में दोष लगता है, इतना तो पक्का !

दूसरी तरफ 'दिन में नींद लेनेवाला मिथ्यात्वी है ' ऐसा पाठ भी देख लिया। अतः सार ये आया कि "दिन में ज़रा नींद लेनेवाला छठा गुण ठाणा वाला मिथ्यात्वी है" ऐसा साबित हुआ। अब ये कैसे हो सकता है? मिथ्यात्व यानि जो पहला गुण स्थान हो तो वो दिन में नींद लेनेवाला एक ही समय में छ्ठे और पहले गुण स्थान में है, ये मानना पड़े, जो संभव नहीं है।

इसलिए समाधान ढूंढना ही पड़ेगा।

वो समाधान येही कि ये मिथ्यात्व निश्चयनय की अपेक्षा से है। निश्चयनय तो छठे गुण स्थान पर भी 500 आदि संयम स्थानों में से भी एकाध संयम स्थान नीचे उतरे तो उसे भी मिथ्यात्वी मानता ही है।

ये पाठ देखते है।

इह यद्देशकालसंहननानुरुपं यथाशक्ति यथावदनुष्ठानं तत्सम्यक्त्वम् । यत उक्तमाचारसूत्रे-जं मोणं ति पासहा सम्म ति पासहा.... । ततो यो देशकालसंहननानुरुपं शक्त्यनिगूहनेन यथाऽऽगमेऽभिहितं तथा न करोति, ततः सकाशात्कोऽन्यो मिथ्यादृष्टिः? नैव कश्चित् किन्तु स एवं मिथ्यादृष्टीनां धुरि युज्यते, महामिथ्यादृष्टित्वात् ।... एकप्रतिज्ञाभंगे सर्वचरणभंगात् तद्भंगे च ज्ञानदर्शनयोरपि भंगात् तयोश्च चरणफलत्वात्

फलाभावे च हेतोर्निरर्थकत्वात्।

गुरुतत्त्व वि. प्रथमोल्लास गाथा १३१

अर्थ: देश काल, संघयण के अनुरूप यथा शक्ति सच्चा अनुष्ठान वो यहां सम्यक्तव है। कारण कि आचारांग का सूत्र है कि जो मौन , वो ही सम्यक्तव....!

जिससे जो आत्मा देश, काल, संघयण के अनुरूप, आगम में कहे अनुसार अनुष्ठान शक्ति को छुपाये बिना नहीं करता, उससे बढ़कर दूसरा कौन मिथ्यादृष्टि? कोई भी नहीं। वो ही मिथ्यात्वियों में सबसे आगे गिना जाता है, क्योंकि वो महामिथ्यात्वि है । एक प्रतिज्ञा के भंग में पूरे चारित्र का भंग होता है, और चारित्र भंग हो यानि ज्ञान और दर्शन भी ख़त्म ! क्योंकि इन दोनों का फल चारित्र है, और जब फल ही ना हो तो ये दोनों हेतु नकामे बन जाते हैं, यानि कि इनको मानने का कोई अर्थ ही नहीं।

भावार्थ: इस पाठ में निश्चयनय का अभिप्राय स्पष्ट दिखाई देता है। इसमें इसने चारित्र के भंग को सम्यक्त्व का भंग मानकर मिथ्यात्वी ही कहा है।

नया पाठ : व्यवहारभिप्रायमाह श्रेणितः-संयमश्रेणितः भ्रष्टस्य-पतितस्यापि व्यवहारः-व्यवहारनयमधिकृत्य भाज्यं भजनीयं मिथ्यात्वम्। कस्यचित्स्यात्, कस्यचिच्च नेति भावः । यत्-यस्मात् अभिनिवेशे-एकान्तेन भगवत्प्रवचनविप्रितिपत्तिलक्षणेऽसद्ग्रहे सति मिथ्यात्वं श्रेणिभ्रष्टस्य भवति। अनभिनिवेशे तु तस्य देशविरतिं भगवति श्रद्धानमात्रं वा दधानस्य न भवति मिथ्यात्वम्, तत्कार्यस्य असद्ग्रहस्याभावात्, सम्यक्तवकार्यस्य च पश्चात्तापादिपरिणामस्य सत्त्वात्।

गुरुतत्त्व वि.प्रथमोल्लास गाथा १३२

भावार्थ : निश्चय तो संयम स्थान से भ्रष्ट या संयम श्रेणी से भ्रष्ट.....दोनों को मिथ्यात्वी ही मानता है। जबकि व्यवहार तो संयम स्थान से भ्रष्ट को तो सच्चा साधु ही मानता है। मगर जो संयम श्रेणी से भ्रष्ट हुआ, उसे सच्चा साधु नहीं मानता, क्योंकि छठा गुण स्थानक गया.... पर इतने मात्र से उसे मिथ्यात्वी भी नहीं मानता। लेकिन सम्यग्दर्शन के कार्य पश्चात्तपादिपरिणाम है ।

संयम श्रेणी से भ्रष्ट आत्मा भगवान के प्रवचन को पूरे उल्टा ही अर्थ स्वीकार करके कदाग्रही बनता है, तो उसको मिथ्यात्व! पर अगर ऐसा कोई कदाग्रह ना हो, तो देशविर्ति स्वीकार करनेवाले या प्रभु पर श्रद्धा मात्र से स्वीकार करनेवाले को मिथ्यात्व ना माने, क्योंकि वहां मिथ्यात्व का कार्य कदाग्रह नहीं। परंतु सम्यग्दर्शन का कार्य पश्चातापादि परिणाम है।

ऐसे श्रेणीभ्रष्ट भी सम्यक्त्वी–देशविर्तिधर तो हो ही सकता है ।

और भी एक–दो महत्त्व के पाठ देख लेते हैं....

अत्र कश्चिदाक्षिपति–ननु चरणस्याभंगं यूयं प्रायश्चित्तस्य भावतो भणथ, तत् प्रायश्चित्तमसंयमस्थानकृतं....

तैः असंयमस्थानैर्विरोधः संयमस्थानानां, तेन कुतः संयमः?

गुरुतत्त्व वि. प्रथमोल्लास गाथा ६५–६७

भावार्थ: पूर्व पक्ष पूछता है कि– "आप दोष लगने पर भी प्रायश्चित के परिणाम के हिसाब से चारित्र भंग नहीं होने की बात करते हो।" यानि कि 'प्रायश्चित का भाव है, पर दोष लगने पर भी चारित्र भंग न हो जाए। ऐसा आप कहते हो।' पर ये बात सही नहीं है। क्योंकि प्रायश्चित कब आये? इस बात पर शास्त्रकार महर्षियों ने फरमाया है कि 'जब असंयम स्थान आता है, तब उसके कारण प्रायश्चित आता है।'

असंयम स्थान यानि संयम का अभाव! संयम का पतन! यानि कि जब संयम ख़त्म होता है तब प्रायश्चित आता है।

अब देखिये....

आप कहते हैं कि 'प्रायश्चित है, तो संयम का पतन नहीं।'

शास्त्र कहते है कि 'प्रायश्चित तभी होता है जब संयम का पतन होता है।'

तो ये तो परस्पर विरोध ही है ना?

अब ये पूर्व पक्ष के समक्ष क्या उत्तर देते है ? वो देखते है।

पाठ : संयम एवाप्रशस्तत्वादसंयमः, अब्राह्मण इत्यादावप्रशस्तार्थेऽपि नञः प्रवृत्तिदर्शनात्, तथा चाप्रशस्तसंयमस्थानान्येवासंयमस्थानानीति तत्कृतस्य प्रायश्चित्तराशेरुपपत्तिरिति भावः

गुरुतत्त्व वि.प्रथमोल्लास गाथा ६७

भावार्थ: 'असंयम यानि संयम का अभाव', ऐसा अर्थ नहीं लेना। पर 'अशुभ यानि मलीन संयम वो ही असंयम' ऐसा अर्थ लेना। अ का ऐसा अर्थ भी ले सकते हैं, जैसे अब्राह्मण यानि ' ब्राह्मणभिन्न शूद्र ' ऐसा अर्थ होता है, जैसे कोई ब्राह्मण सही नहीं होता है,

तो वो ब्राह्मण होते हुए भी अब्राह्मण कहलाता है।

अतः असंयम स्थान यानि अप्रशस्त संयम स्थान....येही अर्थ लेना है।और उसके द्वारा ही प्रायश्चित आता है।

मतलब ये कि जब संयम ख़त्म हो, तब प्रायश्चित आता है, ऐसा नहीं, परंतु संयम अप्रशस्त बने यानि मलीन बने, तब प्रायश्चित आता है....

प्रश्न ये उठता है कि संयम कब मलीन बनता है ? और कब संयम का पतन होता है ? ये विभाग किस प्रकार पड़ता है ?

इसका पाठ इस प्रकार है..

संज्वलनानां-कषायाणामुपलक्षणाद् विद्यमानानां नोकषायादीनां चोदयाद् द्वादशानां पुनः- अनन्तानुबन्धयादीनां कषायाणां क्षयोपशमात् अपकृष्टाध्यवसाये-हीनाध्यवसाये सति शबलचारित्रस्य-अप्रशस्तसंयमस्य निष्पत्तिः, मिलितयोरुक्तोदयक्षयोपशमयोस्तद्धेतुत्वात्

गुरुतत्त्व वि.प्रथमोल्लास गाथा ९७

भावार्थ: (1) संज्वलन कषायों एवम् नोकषायों का उदय होता है, (2) दूसरी तरफ अनंतानुबंधी आदि बारह कषायों का क्षयोपशम होता है.... तब चारित्र का अध्यवसाय हीन होता है और तब अप्रशस्त–संयम की उत्पत्ति होती है। (और तब प्रायश्चित आता है)

मतलब ये है कि बारह कषायों का क्षयोपशम होने से जीव संयम स्थान ऊपर बिराजमान है। वहां सामान्य से तो संज्वलनकषायों का उदय तो चालू ही है, मगर जब ऐसा संज्वलन का उदय होता है या उसमे जीव ऊपर के संयम स्थान में से नीचे के संयम स्थान में उतरता है, तब ये नीचे उतरना वो अप्रशस्तता है, मगर बारह कषायों का क्षयोपशम चालू ही है, यानि संयम है। इस प्रकार बनता है अप्रशस्त–संयम स्थान ! और उस समय प्रायश्चित आता है।

जब तक नीचे नहीं उतरता है, तब तक प्रायश्चित नहीं आता है।

अब फिर प्रश्न आता है कि "इसमें मालूम कैसे पडेगा कि जीव नीचे उतरा या नहीं ? उसे बारह कषायों का क्षयोपशम हाज़िर है या नहीं ?"

इसके उत्तर हेतु हम फिर पूर्व में देखे गए पाठ का अवलोकन करते हैं।

पाठः अथ कियत्प्रायश्चित्ततापत्तौ संयमः स्यान्न वा? इत्याह- छेदप्रायश्चित्तस्य यावद्दानं तावदेकमपि व्रतं नातिक्रमेत् । मूलेन- मूलप्रायश्चित्तेनैकं व्रतमतिक्रमंश्च पञ्चाप्यतिक्रमेत्।

गुरुतत्त्व वि. प्रथमोल्लास गाथा १००

भावार्थ: कितना प्रायश्चित आये तब तक संयम रहता है, और कितना प्रायश्चित आये तब संयम नहीं रहता है...इसका जवाब ये है कि शास्त्रों में जब तक अंत तक प्रायश्चित देने का उल्लेख है, तब तक संयम रहता है। जहां मूल प्रायश्चित देने का बताया गया है, वहां संयम का पतन समझना।

उदाहरण : दिन में नींद ले तो उसमें अंत से भी बहुत छोटा प्रायश्चित है, तो वहां संयम रहेगा ही, पर चौथे व्रत का भंग करे तो इसमें मूल देने का बतलाया गया है, तो वहां संयम का

पतन समझना।

मतलब ये है कि अंत तक के प्रायश्चित जहां जहां दर्शाये गए है, वहां वहां असंयम स्थान यानि अप्रशस्त संयम स्थान...इस प्रकार अर्थ करना। वहां संजवलनोदय के साथ बारह कषायों का क्षयोपशम समझना।

मूल प्रायश्चित जहां दर्शाने में आये, वहां संज्वलन के साथ अन्य कषायों का भी उदय समझना, यानि वहां चारित्र का पतन समझना।

(सच्ची तिथि की आराधना न करनेवाले को जो मूल प्रायश्चित दिया गया हो, तो उनके चारित्र का विनाश समझना, पर जो अंत तक या उसके भी नीचे का प्रायश्चित दिया गया हो, तो उनको चारित्र का अतिचार समझना। अर्थात, चारित्र मलीन बने, मगर चारित्र तो टिका हुआ ही है।

यानि

(1) 'सच्ची तिथि की आराधाना नहीं करे, उसे मूल प्रायश्चित।' ऐसा पाठ मिले तो ऐसा कह सकते है कि वे सभी चारित्र से हीन !

(2) ऐसा पाठ मिलता है, तो भी चारित्र से हीन ही कहे जाएंगे। देश चारित्र से या सम्यक्त्व से हीन नहीं कहे जा सकते हैं। कारण कि हमने पूर्व में वो पाठ भी देख लिया है जिसमें ये कहा गया है कि अगर चारित्रभ्रष्ट को भी कदाग्रह ना हो, तो पांचवां या चौथा गुण स्थान हो सकता है। अतः उनको भी मिथ्यात्वी कहने से पहले ये सब विचार करना जरूरी है कि किसमें कदाग्रह है ?

रहस्य

मुझे ख्याल है कि

(1) ये पढनेवाले सभी संस्कृत पढ़े हुए नहीं हैं, और ये सारे शास्त्रपाठ उनके लिए काला अक्षर भैंस बराबर ही साबित होंगे।

(2) जिन्होंने संस्कृत की पढाई की है, वे भी सभी न्याय पढ़े हुए नहीं हैं। मान लो कि न्याय पढ़े हुए हैं, फिर भी महोपाध्याय यशोविजयजी के ग्रन्थों की शैली समझना सभी के लिए आसान नहीं है। (कई स्थानों पर तो मुझे भी समझने में दिक्कत आती थी)

(3) छेद ग्रन्थ और कर्म ग्रन्थ का अभ्यास जिनको नहीं हुआ ही, उनके लिए भी ये शास्त्र पाठ समझना और उनका भावार्थ समझना बहुत मुश्किल ही है.....

फिर भी सबसे पहले शास्त्रपाठ दिए हैं, ताकि ऐसी गंभीर बातों के लिए कुछ तो शास्त्रीय आधार आवश्यक है ना ? शास्त्रपाठ दिए बिना सीधे रहस्य दे दूं तो किसीको भी विश्वास ना आये, क्योंकि ये बातें–रहस्य अप्रसिद्ध भी हो सकते हैं, इसलिए ये रहस्य कोई स्वीकार ना भी करे, और वैसे स्वीकार करने योग्य भी नहीं है।

इसलिए प्रामाणिकता बढ़ाने –पक्का करने हेतु शास्त्र पाठ दर्शाये गए हैं।

अब इस प्रकरण में हम इन शास्त्रपाठों द्वारा प्राप्त रहस्य को देखते हैं। इसमें अभी कोई शास्त्र पाठ नहीं लेंगे। पर सीधे सीधे पदार्थ ही लेंगे, जिससे सभी को समझने में सरलता हो।

ध्यान रखिए ! ये रहस्य अत्यंत उपयोगी है, संयमियों के लिए तो सही ही, पर आत्मार्थी गृहस्थों के लिए और अयोगोदवादी संयमियों के लिए भी अत्यंत अत्यन्त उपयोगी हैं, इसलिए ही समझ में ना आये, फिर भी दो– चार बार पढ़कर भी बराबर समझना। फिर भी अगर समझ में ना आये तो किसी भी गुरुमहाराज से संपर्क करके उनके पास समझना। और जिनको एक–दो बार पढ़कर ही समझ में आ जाए, वे भी इतना तो निश्चित कर लें कि रहस्य बारबार पढ़ना ही और आत्मसात करना।

और सरलता के लिए एक साथ रहस्य लिखने के बदले 1–2–3 ....करके छोटे छोटे टुकड़ों में पूरा रहस्य देखते हैं।

चलिए, अब रहस्य का आरम्भ करते हैं!

(1) कषाय 4 प्रकार के होते हैं, अनंतानुबंधी–अप्रत्याखानीय–प्रत्याखानीय–संज्वलन!

(2) जिसको अनंतानुबंधी कषाय का उदय हो वो मिथ्यात्वी! (दूसरे गुणस्थान पर मिथ्यात्व नहीं, अनंतानुबंधी का उदय है। इसलिए ऐसे तो ' अनंतानुबंधी के उदय वाला जीव

मिथ्यात्वी ही कहा जाता है....' ऐसा नहीं। मगर दूसरे गुणस्थान का काल अति अल्प। इसमें रहनेवाले जीव अति अल्प.... वहां से जीव अवश्य मिथ्यात्व ही पाते हैं...इसलिए हम इस प्रकार कहते हैं कि अनंतानुबंधी कषाय का उदय जिसे हो, वो मिथ्यात्वी)

(3) जिसको अनंतानुबंधी का उदय ना हो, पर बाकी के तीन कषाय का उदय हो, वो मिथ्यात्वी नहीं, पर अविरतिधर–सम्यक्त्वी ! गुण स्थानक चौथा !

(4) जिसको अनंतानुबंधी और अप्रत्याखानीय ये दो कषाय का उदय ना हो, पर बाकी के दो कषायों का उदय हो, वो देश विरतिधर यानि गुण स्थानक पांचवां !

(5) जिसको सिर्फ संज्वलन कषाय का उदय हो, वो साधु! गुण स्थानक 6से 10 !

(6) 11 से 14 गुण स्थान में किसी भी कषाय का उदय नहीं, यानि वे बहुत ऊंची कक्षा के साधु गिने जाते हैं।

(7) अब तो 7में गुण स्थान से ऊपर कोई बढ़ नहीं सकता। यानि अब हमारा सबका अगर साधुपन सच्चा हो तो भी छठा–सातवां गुण स्थान ही !

(8) अनंतानुबंधी आदि हर कषाय चार–चार प्रकार के हैं–क्रोध–मान–माया–लोभ।

(9) गुण स्थान वे मुख्यतया आत्मा के अध्यवसाय परिणाम परिणति रूप है। बाहर के आचार वे गुण स्थान को प्राप्त करने में उपयोगी बन सकते हैं, पर बाहर के आचारों से गुण स्थान मिलेंगे ही, ऐसा पक्का नहीं।

(10) जैसे जैसे कषाय घटते है, वैसे वैसे गुण स्थान बढ़ते हैं।

(11) हम सामान्य से तीन गुण स्थान जानते हैं– सम्यक्तव–देश विरति–सर्व विरति।

(12) ये तीन गुण स्थान यानि 4,5, और 6–7 ऐसे विचार किये गए हैं।

(13) जैसे एक मकान में 5–10–20–50 मंज़िल होती है, ऐसे इन सम्यक्त्व आदि में असंख्य भेद होते हैं। यानि मंद से मंद सम्यक्त्व का अध्यवसाय, फिर उससे तीव्र, और फिर उससे भी तीव्र... ऐसे कुल असंख्य! देश विरति में भी असंख्य!और सर्व विरति मे भी असंख्य!

(14) ये असंख्य की संख्या इतनी बड़ी है कि कोई आत्मा दीक्षा लेने के बाद पूर्व करोड़ वर्षों तक सतत् क्रमशः ऊपर ही ऊपर जाया करे, आगे ही आगे बढ़ा करे, तो भी वो संख्या पूरी ना हो। हाँ! बड़ी छलांग लगाये, तो सबसे ऊपर भी पहुँच जाए, पर जो धीरे–धीरे ऊपर चढ़े तो सारी जिंदगी भी अगर वो चढ़ता रहे, तो भी वो संख्या पूरी ना हो !

(15) हम संयम की, सर्व विरति पर विचार करें, तो ऐसे असंख्य अध्यवसाय संयम के हैं, इन सब का समूह यानि एक मकान ! और उसे नाम दे देते हैं संयम श्रेणी !

और वो एक एक अध्यवसाय (संयम का परिणाम) यानि एक एक मंज़िल! और उसे नाम दे देते हैं संयम स्थान !

(16) जैसे 15–20–25–50–300 मंज़िल का एक मकान....वैसे संयम स्थानों की संयम श्रेणी !

(17) हम कल्पना रूप में पदार्थ पर विचार करें... मानो कि असंख्य यानि 1करोड़...तो कुल 1 करोड़ संयम स्थान हुए। इसमें सबसे छोटे का नाम यानि जघन्य यानि सबसे कम शुद्धि वाला संयम स्थान यानि पहला संयम स्थान ! इससे बढ़कर विशुद्धि वाला संयम स्थान यानि दूसरा संयम स्थान ! और उससे भी बढ़कर विशुद्धि वाला स्थान यानि तीसरा संयम स्थान ! ऐसे कुल 1 करोड़ संयम स्थान हैं !

(18) इन 1 करोड़ संयम स्थानों में से किसी भी संयम स्थान पर जीव होता है, तब वो साधु कहलाता है, सच्चा साधु ही कहलाता है। छठे आदि गुण स्थान का मालिक ही है !

(19) इन किसी भी संयम स्थान में अनंतानुबंधी आदि 12 में से किसी भी कषाय का उदय ही नहीं होता है। सिर्फ संज्वलन क्रोध आदि 4कषायों का उदय होता है।

(20) जब उस संज्वलन कषाय का रस मंद पड़ता है, तब जीव संयम स्थान में ऊपर चढ़ता है, जब संज्वलन कषाय का रस तीव्र बने, तब जीव संयम स्थानों से नीचे गिरे।

(21) इस प्रकार चढ़त–पड़त चलता ही रहता है, पर जहां तक अनंतानुबंधी या अप्रत्याख्यानी या प्रत्याख्यानी कषायों का विपाकोदय नहीं होता है, तब तक वो जीव संयम श्रेणी में ही रहता है। यानि कि 1 करोड़ संयम स्थानों में ही रमण करता है।

(22) जब जीव संज्वलन कषाय के रसोदय बढ़ने के कारण जरा सा भी नीचे गिरे, तब ऐसा कहा जाता है कि जीव को अतिचार लग गया। पर इसमें चारित्र ख़त्म नहीं होता। दूसरे शब्दों में कहें तो उसका चारित्र मंद पड़ गया, पर मुर्दा नहीं बना। वो चारित्र मंद पड़ गया, इसका अर्थ यही कि वो अभी जिन्दा है। क्योंकि मुर्दे के लिए कभी मंदा शब्द का उपयोग नहीं होता।

(23) जिसके पास 25 लाख है, उसके पास अगर 30 लाख हो तो... 'इसको धंधे में नफा मिला है' ऐसा ही कहलायेगा ना? पर जिसके पास 50 लाख हो, और 45 लाख हो जाये तो उसने धंधे में नुकसान किया ऐसा ही कहा जायेगा ना ?

अब इस समय आप देखेंगे कि एक व्यक्ति के पास 30 लाख है, और दुसरे के पास 45 लाख है....यानि 30 लाख वाला ऐसे तो उस 45 लाख वाले से बहुत नीचे है, फिर भी बोलने में तो ऐसे ही आयेगा कि 30 लाख वाला आगे बढ़ा और 45 लाख वाला पीछे आ गया....

इसी प्रकार

1 करोड़ संयम स्थान में कोई आत्मा 1 लाखवें संयम स्थान पर है, और वहां से छलांग लगाकर डेढ़ लाखवें स्थान पर पहुँच जाता है, तो वो ऊपर चढ़ा कहलायेगा, उसे संयम में नफा प्राप्त हुआ कहलायेगा।

दूसरा आत्मा मानो कि 3 लाखवें संयम स्थान पर है, और वहां से नीचे लुढ़क कर 2 लाखवें संयम स्थान पर पहुंचता है, तो वो गिरा हुआ कहा जाएगा, और उसे संयम में अतिचार लगा हुआ कहा जायेगा।

वैसे इस समय डेढ़ लाख पर चढ़ा हुआ जीव 2 लाख पर रहे हुए जीव से नीचे ही है, फिर भी वो नीचे से ऊपर गया है। यानि उसने नफा कमाया हुआ ही कहा जाएगा। और वो दूसरा ऊपर से नीचे आया हुआ है, इसलिए उसे अतिचार कहा जायेगा।

(24) ऐसा होते हुए भी 2लाख पर रहा हुआ तो ऊंचा ही है ना ? यानि उसे कर्मक्षय पुण्य बंध आदि तो 2 लाखवें संयम स्थान के प्रमाण से ही प्राप्त होगा। दूसरी तरफ 1 लाख से डेढ़ लाख पर आया हुआ जीव चढ़ा हुआ होने के बावजूद उसका संयम स्थान तो नीचे ही है ना ? इसलिए उसे कर्मक्षय–पुण्यबन्ध डेढ़ लाखवेँ संयम स्थान के प्रमाण से ही प्राप्त होगा।

यानि कि अतिचारवाले को अतिचार होने के बावजूद संयम स्थान ऊंचा होने से उस प्रमाण से ज्यादा कर्मक्षयादि प्राप्त होता है। जब आगे बढ़नेवाले को अतिचार नहीं होने के बावजूद भी पहले वाले जीव की अपेक्षा से संयम स्थान नीचा होने के कारण उसे पहले जीव की अपेक्षा से कर्मक्षयादि कम प्राप्त होते है ।

उदाहरण : 10 हज़ार के पगारवाले का पगार 12 हज़ार हो जाए, और दूसरी तरफ 20 लाख पगारवाले का पगार घट के 15 लाख हो जाये, तो 12 हज़ार वाले का पगार बढ़ा हुआ होने के बावजूद 15 लाख पगार वाले के समान गाडी–बंगला में घूमना–फिरना–रहना नहीं कर सकता। हाँ! 2 हज़ार बढ़ने का फायदा उसे ज़रूर हुआ है। दूसरी तरफ 20 लाख वाले का पगार घटकर 15 लाख होने के बावजूद भाड़े के घर में रहने वाला या रिक्शे में घूमने वाला नहीं हो जाता। हाँ ! उसे नुकसान अवश्य कहा जाता है, और उसी नुकसान के हिसाब से उसके रहन–सहन में थोड़ा फर्क तो आएगा ही। पर वो 12 हज़ार वाले से कमजोर हो गया, ऐसा तो हरगिज नहीं मान सकते।

उपरोक्त दृष्टान्त के द्वारा इसको बराबर समझ सकते हैं।

(25) इतना तो पक्का है कि जो आगे बढ़ता है, उसमें आगे बढ़ने की चाहत है। इसलिए वो धीरे धीरे बढ़ते हुए 2 लाख, 3 लाख, 5 लाख, 50 लाख तक के संयम स्थान पर पहुँच जाता

है।

और जो नीचे गिरता जाता है, उसमें नीचे गिरने के संस्कार बढ़ते जाते हैं, यानि वो 2 लाख पर से धीरे धीरे डेढ़ लाख, 1 लाख, 50 हज़ार...ऐसे पूरी तरह से नीचे भी उत्तर सकता है!

ऐसे ही ये चढ़त–पड़त सब के लिए शक्य है, ऐसा मानना।

(26) मानो की कोई आत्मा 50 लाखवें संयम स्थान पर है, तब उसके संज्वलन का उदय तो चालू ही है। अब मानो कि इसकी तीव्रता 50 पोइन्ट की है। अब जो इसे स्वाध्यायादि में शुभ भाव जागे, जिसके कारण संज्वलन की तीव्रता 49 पोइन्ट हो जाए, यानि कि 1 पोइन्ट घटे, तो वो आत्मा संयम स्थान में ऊपर चढ़ता है। यानि कि 50 लाख और 500वें संयम स्थान पर पहुंचता है।

ऐसे वाचना सुनते फिर उसके शुभ भाव बढे, संज्वलन की तीव्रता घटे, 48 पोइन्ट हो जाए, तब वो आत्मा संयम स्थानों में ऊपर चढ़ता है, 50 लाख और 1000वँ संयम स्थान पर पहुंचता है। इस प्रकार जैसे जैसे संज्वलन कषाय की तीव्रता घटेगी, वैसे वैसे आत्मा ऊपर के संयम के स्थानों में चढ़ता ही जाये।

(27) मानो कि वो संयमी 50 लाखवें संयम स्थान पर है, और उसे गोचरी में कड़ी धूप के कारण ऐसा विचार आये कि बहुत धूप है, बरसात कब आएगी ? तो ये संज्वलन कषाय जागा। यानि कि उसकी तीव्रता 50 पोइन्ट के बदले 51 पोइन्ट हो गयी। यहां संयमी इस संयम स्थान पर से लुढ़ककर 49 लाख 99 हज़ार 990 वें संयम स्थान पर पहुँच गया, यानि कि वो 10 संयम स्थान नीचे गिरा।

इसके बाद कभी कहीं किसी घर में वोहरने के लिए प्रवेश करता है, वहां ऊपर पूरी तेज़ी से पंखा चलता है, और वहां पर ही गोचरी वोहरनी हो, और उसे राहत महसूस होती है, एकाध मिनट उसे वहाँ ज्यादा खड़े रहने का मन होता है... इन सब में संज्वलन कषाय के पोइन्ट मानो कि 55 हो, यानि वो संयमी शायद 49लाख 99 हज़ार 900 ऊपर पहुंचे।

इस प्रकार जब जब संज्वलन की तीव्रता बढ़ेगी, तब तब वो नीचे उतरता जाएगा।

(28) जीव जब एकाध भी संयम स्थान से नीचे उतरे, तब वो अतिचार कहलाता है। यहां व्यवहारनय तो यही कहता है कि "इस जीव को दोष लगता है, अतिचार लगता है..... पर वो है तो सच्चा साधु ही! क्योंकि वो छठे गुण स्थान पर रहा हुआ है, कारण कि वो संयम श्रेणी में रहा हुआ है।"

(29) जीव जब एकाध भी संयम स्थान नीचे उतरे, तब निश्चयनय ऐसे ही कहता है कि

"भले ही वो संयम श्रेणी में हो, भले वो छठे गुणस्थान पर हो.... पर मैं तो उसे मिथ्यात्वी ही मानूंगा। कारण की छोटे से छोटा प्रमाद, छोटे से छोटा भी कषाय यानि मिथ्यात्व !"

(30) ऐसे व्यवहारनय और निश्चयनय दोनों ऐसा ही कहते हैं कि 'इस साधु को संज्वलन की ही वृद्धि हुई है, ये साधु संयम स्थान से नीचे आया हुआ होने पर भी संयम श्रेणी में ही है। वो साधु छठे गुणस्थान पर है।'

पर इन साधु को किस नाम से बुलाया जाये ? इस पर दोनों में मतभेद है। व्यवहार कहे 'वो अतिचार वाला साधु'। निश्चय कहे 'वो मिथ्यात्वी'।

(31) नय वस्तुओं के स्वरुप में भेद नहीं मानता, पर 'ये एक ही वस्तु को किस नाम से पहचानना' इसमें उनके बीच भेद है।

उदाहरण : हम परीक्षा लेते हैं, उसमें 75%को पास गिनते हैं। अब किसीको 70% आये, तो लोग कहेंगे कि 'ये तो पास! फर्स्ट क्लास!' और हम कहेंगे कि 'फर्स्ट क्लास भी नहीं, पास भी नहीं, नापास !'

अब लोग और हम .... दोनों पक्ष ये तो मानते हैं कि 70% आये हैं पर लोग 70% यानि फर्स्ट क्लास कहते हैं और हम 70% यानि नापास कहते हैं।

यानि यहां अतिचारवाला साधु संयम श्रेणी में होते हुए भी निश्चयनय उसे मिथ्यात्वी यानि नापास कहता है, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। क्योंकि उसकी मान्यता ही उस प्रकार की है। मगर हकीकत ये है कि वो साधु संयम श्रेणी में होने से सच्चा साधु ही है।

संयम स्थान में से नीचे गिरनेवाले को संकलिष्यमान कहते हैं और ऊपर चढ़ने वाले को विशुद्धयामान कहते हैं।

(32) पंचाशकदि में कहा गया है कि 'पांचवें आरे में आरादि के कारण गुरु उत्तरगुणों में – आधाकर्मादि दोषों के बाबत में कमज़ोर होते हैं, तो चलता है, पर मूल गुण में कमज़ोर नहीं चलते।'

इसका मतलब क्या ? मतलब यही कि चौथे आरे में 'जो उत्तर गुण से भी हीन हो, वो भी गुरु नहीं। और पांचवें आरे में उत्तर गुण हीन हो तो , वो गुरु के तौर पर चलेगे।'

ये एक प्रकार से दो नय ही हुए ना ?

दोनों नय कहते हैं कि 'वो साधु उत्तर गुण हीन है।'

पर इसमें चौथा आरावाला नय कहता है कि 'वो कुगुरु।'

पांचवां आरावाला नय कहता है कि 'वो सुगुरु।'

(33) 'जो संयम श्रेणी में होता है, वो सामान्य से वंदनीय है,' ये व्यवहार मार्ग है। हाँ! समाचारी प्रमाण से वंदन करना या ना करना, वो अलग बात! मगर इतने मात्र से वो कुसाधु–कुपात्र नहीं बनता है। जैसे बुजुर्ग साधु छोटे साधु को वंदन नहीं करता है, तो इसमें 'छोटा कुसाधु है इसलिए वंदन नहीं किया जाता', ऐसा नहीं है। पर ये एक समाचारी है। ऐसा प्रस्तुत में भी ध्यान से समझना है।

(34) परीक्षा में जिसे 35% से कम आता है, वो तो व्यवहार और निश्चय दोनों के प्रमाण से नापास ही गिना जाता है। ऐसे ही जो संयमी संयम स्थान से गिरते गिरते संयम श्रेणी ही खो दे, यानि कि पांचवीं–चौथी या पहले गुण स्थान पर पहुँच जाता है, तो वो साधु दोनों नय के अनुसार मरा हुआ ही समझ जाएगा।

(35) फिर भी बड़ा फर्क ये है कि निश्चयनय तो सिर्फ संयम स्थान से संयम स्थान पर ही नीचे उतरने को भी मिथ्यात्व मानता है, जबकि व्यवहार नय के पास तो बहुत विकल्प हैं।

* जो संयम स्थान पर से संयम स्थान पर ही नीचे उतरे, तो वो सुसाधु ही!

* जो संयम श्रेणी खो दे, पर श्रावक के अध्यवसायों में अटक जाये, तो वो सुश्रावक!

* जो वो श्रावक श्रेणी को खोता है, पर सम्यक्त्व के अध्यवसायों में अटक जाता है, तो वो सम्यक्त्वी!

* जो वो सम्यक्त्वी श्रेणी भी खो दे, तो वो मिथ्यात्वी!

(36) सबसे बड़ा सवाल तो ये है कि इसकी जानकारी कैसे मिले? कि वो संयमी संयम श्रेणी में है कि नहीं? क्योंकि ये तो अंदर के अध्यवसायों की चढ़त–पड़त इतनी ज्यादा होती है कि हम किसी संयमी को पहला खमासना देते हैं, तब वो संयम श्रेणी में होता है, और दूसरे खमासने में वो शायद पूरा मिथ्यात्वी भी बन गया होता है, और इच्छकार–अब्भुट्ठिओ के समय वो वापस पूर्णरूप से संयम श्रेणी में प्रवेश कर चुका होता है....

अतःअगर ऐसा जो नियम करते हैं कि

'जो संयम श्रेणी में होगा उसीको वंदन करेंगे...दूसरे को नहीं'

तो वो नियम प्रायोगिक नहीं बनता, क्योंकि ये जानकारी शक्य नहीं है।

(37) इसका समाधान:

पहली बात तो ये कि केवली–पूर्वधर आदि तो सब जानते है कि कौन संयम श्रेणी में है ? और कौन नहीं ? यानि ये बात नहीं ही जान सकते, ऐसा नहीं। हाँ ! वंदनादि व्यवहार के लिए इसका विशेष उपयोग शक्य नहीं, ये सच है।

अब मुख्य बात....

व्यवहार को ज्ञानी पुरुषों ने इस प्रकार व्यवस्थित किया है।

ज्ञानी पुरुषों ने देखा कि 'उत्तर गुणो के अतिचारों में संयम स्थान से पतन होता है। पर प्रायः संयम श्रेणी से पतन संभव नहीं है।'

उन्होंने ज्ञानबल से ये भी देखा है कि 'मूलगुणों के अनाचार में संयम श्रेणी से पतन संभव है।'

उन उन दोषों में उन्होंने अंत तक के प्रायश्चित भी दर्शाये हैं।

कोई भी संयमी किसी भी दोष का सेवन करे, जो उसे उस दोष का मूल प्रायश्चित न प्राप्त हुआ हो, गीतार्थ गुरुजनों ने मूल न दिया हो, तो उसे संयम श्रेणी में गिनना, सुसाधु गिनना। भले ये व्यवहार ही है, पर हमको तो जीना व्यवहार में ही है।

(39) चौथे व्रत का भंग आदि बड़े दोषों में मूल प्रायश्चित आता है। इसलिए ऐसे दोषवाले को संयम श्रेणी से बाहर गिनना।

(40) इस पर ये निर्णय लिया जा सकता है कि 'मूल प्रायश्चित जिन जिन बडे बड़े दोषों में दिया गया हो, उन उन दोषों के सेवन करनेवालों को वंदन योग्य नहीं मानें, वंदन को टाल दें।' परंतु तिथि आदि दोषों में मूल प्रायश्चित जो न बताया हो, तो उसमें दोष अवश्य मानना, पर ये समझो कि ये दोष किसी में हो, और उसे इतने मात्र से अवन्दनीय नहीं मानना। शायद गच्छ सामाचारी के हिसाब से उनको वंदन करने में न आये, फिर भी श्रावकों को तो इस रीत की गच्छ सामाचारी की बाधा आती नहीं। इसलिए श्रावक तो उल्लासपूर्वक वंदन कर सकते हैं और इस प्रकार की प्रेरणा आदि भी की जा सकती है।

(41) कल्पसूत्र के दृष्टान्त तो हमको याद हैं कि 'गुरु ने नट को देखने की मनाई की थी, तो शिष्य ने नटनी देखने का पाप किया, और बहाना बनाया कि आपने तो नट को देखने की मनाई की थी, नटनी की नहीं।' ऐसे में उन साधुओं को जड़–वक्र कहने में आया है।

सही ना ?

अब इस बात का यहां पर विचार करें कि

श्री शास्त्र में ऐसा दर्शाने में आया है कि "जो उदयतिथि की आराधना ना करे, वो मिथ्यात्वी !" अब इस वाक्य को ध्यान में रखकर मानो कि तिथि की उचित आराधना नहीं

करनेवाले को हम मिथ्यात्वी मानें । पर सबसे पहले दर्शाये ऐसे आगम में अन्य सैंकड़ों बातों में भी मिथ्यात्व तो दर्शाया हुआ ही है। तो वहां ये सब भी मानना–कहना पड़ेगा ना ? कि इर्यासमिति–मुहपत्ति का उपयोग– पूंजन प्रमार्जन आदि के बाबत में दोष सेवन करनेवाला भी मिथ्यात्वी !

पर अगर ऐसा कहने में नहीं आये तो ये उचित नहीं होगा ना ?

(42) कल्पसूत्र में जो कहा गया है, उसका अर्थ तो ये है कि 'एक बात कही है, उससे दूसरी बात नहीं कही हो तो भी उसके जैसी ही बात समझनी ।' उदाहरण : नट की ना के बाद नटनी की ना ।

ये जो न समझ सके, वो जड कहलाये।

यहाँ तो "जैसे तिथि बाबत की आज्ञा में दोष सेवन में मिथ्यात्व दर्शाया गया है, वैसे अन्य सभी आज्ञा में दोष सेवन में मिथ्यात्व नहीं दिखाया गया है और समझना ही है" ऐसा नहीं है। पर अन्य सभी आज्ञाओं में भी मिथ्यात्व स्पष्ट दर्शाया ही है। तो ये हम क्यों नहीं समझ सकते ? नहीं कहा हुआ भी समझना चाहिए, और अगर ना समझे तो हम जड !

तो जो कहा हुआ है, वो तो समझना ही है। ये भी ना समझे तो हम और भी ज्यादा जड़ हुए ना ? अलबत्ता, गिरता काल होने से ऐसी भूल अपने से होती है, पर ये भूल सुधारने का सक्रिय प्रयत्न तो करना ही चाहिए।

(43) तिथि बाबत की आराधना भले एक न बने, भले इस प्रकार का कोई स्थाई समाधान भी ना निकले....पर कम से कम इतना तो हो ही सकता है ना ? उभयपक्ष ये बात मान्य करे कि

* तिथि की आराधना शास्त्र के हिसाब से हो, तो श्रेष्ठ !

* तिथि की आराधना के बारे में शास्त्रीय निर्णय परस्पर विचार–विमर्श द्वारा हो और दोनों पक्ष एक समान आराधना करे तो श्रेष्ठ !

* जब तक ऐसा कोई समाधान न हो तब तक

* जिनका भी परस्पर वंदन व्यवहार चालू हो सके, वो ऐसा करें।

* जिनके लिए ये संभव नहीं, वे " मत्थएण वन्दामि" तो अवश्य करें।

* उभयपक्ष अपने श्रावकों को ये खास समझाए कि "आपके लिए तो सभी वंदनीय हैं ही, और आप तो सभी की अच्छी से अच्छी भक्ति कर सकते हो । कारण की सभी सुसाधु हैं। सिर्फ तिथि की आराधना में गड़बड़ होने से मिथ्यात्व नहीं लगता है। हाँ, ये एक अतिचार अवश्य गिना जाये, पर ऐसे तो सैंकड़ों अतिचार हरेक के जीवन में है ही। इतने मात्र से किसी को अवन्दनीय नहीं कहना।"

बस, उभयपक्ष यदि इतना मात्र भी स्वीकार कर ले, तो बहुत शांति हो सकती है।

(44) ये तिथि प्रश्न जब ऊपर मुजब का 'मुहपत्ति का उपयोग रखना...' आदि सैंकड़ों बातों के समान कक्षा में जाना जायेगा, तो उसके लिए अब चर्चा करने की भूमिका सहज ही खड़ी होगी। अभी क्या हमने कभी भी इस विषय पर सख्ती–कड़काई बरती है ? कि 'मुहपत्ति का उपयोग आप क्यों नहीं रखते ? आप मिथ्यात्वी !' इस बात की चर्चा भी हो , तो सभी कहेंगे कि 'मुहपत्ति का उपयोग रखना, ये तो अच्छी बात है, परंतु ना रखो तो कही मिथ्यात्वी ना बन जाये...।' बस , ऐसी सौम्य भाषा तिथि की आराधना के लिए भी प्रगट होगी।

(45) 'पर कौनसी तिथि की आराधना सच्ची, ये तो पक्का होना चाहिए ना ?' ऐसा सबके मनमें तो होता ही है। शायद ये बात भी मनमें आये कि 'पहले ये पक्का करो कि एक तिथि ही सच्ची है, फिर सभी बातें मंजूर !' (ऐसा एक तिथि पक्ष कहेगा)। 'पहले ये पक्का करो कि दो तिथि ही सच्ची है, फिर सभी बातें मजूर ! (ऐसा दो तिथि पक्ष कहेगा)

पर मैं नम्र भाव से विनंती करता हूँ कि 'प्रथम तो सच्ची तिथि का निर्णय करने का आग्रह न रखा जाए तो बेहतर होगा', इसका कारण सिर्फ इतना ही है कि वर्षों के इस संघर्ष के कारण सभी के मन थोड़े खट्टे तो हो गए हैं। इसलिए एक दूजे की सच्ची बात को भी शीघ्र स्वीकारने की तैयारी नहीं होगी, और फिर सच्ची बात मारी जायेगी।

मानो कि एक तिथि पक्ष सही मायने में सच्चा होगा, तो भी दो तिथि पक्ष इसे स्वीकार नहीं कर पायेगा।

मानो कि दो तिथि पक्ष सही मायने में सच्चा होगा, तो भी एक तिथि पक्ष इसे स्वीकार नहीं कर पायेगा।

इसमें नुकसान तो यही हुआ ना कि सच्चा मत स्वीकारा नहीं गया ।

इसके बदले परस्पर की बातें सुनने की, विचार करने की, स्वीकार करने की भूमिका खड़ी हो, परस्पर गलत साबित करने के बदले सिर्फ तत्व को पाने की लगन उत्पन्न हो, परस्पर मैत्री आदि भावनाएं ज्यादा से ज्यादा घूँटने में आये...बाद में जो तिथि की चर्चा करने में आये, तो जल्दी निर्णय होगा, जिससे संघ में एक आराधना हो, और समझो कि ऐसा कोई एक निर्णय नहीं हो पाया, तो भी तिथि की बात पर किसीको मिथ्यात्वी नहीं कहा जाए, क्योंकि ऐसे तो मुहपत्ति का उपयोग आदि नहीं रखने बाबत सैंकड़ों बातों में कहना पड़े ऐसा है, और ये तो एक भी पक्ष को मान्य होगा ही नहीं ना ?

भव्य भूतकाल को वर्त्तमान बनाएं....

मैंने इतिहास की पुस्तकें कम ही पढ़ी हैं। अपने निकट के आचार्य भगवंतों के जीवन चरित्र भी नहीं के बराबर पढ़े हैं। हाँ! पूज्य गुरुदेवश्री के मुख से निकट के महान पुरुषों के अनेकानेक प्रसंग सुने जरूर है, उस समय पू.गुरुदेवश्री के मुख पर गुणानुराग का एक अद्वितीय आनंद निहारा है, और वो आनंद अचानक दूधपाक में नींबू की खटास गिरे, उस प्रकार भूतकाल में बने हुए प्रसंगों को याद करने के कारण शासन–संघ को हुए नुकसान को याद करते ही अकथ्य वेदना भी उनके मुख पर देखी है, जब वे वो वेदना अपने अंदर नहीं झेल सकने के कारण अपने शिष्यों के सामने प्रकट करते तब आँखों से आंसुओं की बूंदें नहीं पर अश्रुधारा बहती भी हमने देखी है...

वो मेरे गुरुदेवश्री थे, इसलिए नहीं लिख रहा हूँ, पर उनके साथ रहने से मुझे मेरे क्षयोपशम के अनुसार जैसा लगा वैसा ही कह रहा हूँ कि

* वे एक तिथि के पक्ष में थे और सारी जिंदगी उसीमें रहे।

* पर एक तिथि पक्ष का कट्टरवाद उनके लहू की एक बूँद में भी नहीं था।

* वे दोनों पक्षों के समाधान की इच्छा रखते थे, जिससे हज़ारों–लाखों श्रावकों में सुलग रही होली रुके, शासन की बदनामी रुके...आदि।

* वे जब भी साबरमती स्मृति मंदिर के पास से निकलते थे, तब कोई देखे या न देखे, वे पू. आ. श्री रामचंद्रसूरीजी को वंदन अवश्य करते।

* पू.आ.श्री कीर्तियशसूरीजी उनको हर्पीस की शाता पूछने एक बार शाम को विशेष विहार कर तपोवन पधारे, तब खूब हर्ष के साथ उनको कहा कि "ऐसा हर्पीस तो मुझे बारबार हो, जिससे आप मुझे बारबार शाता पूछने आओगे, इस प्रकार नजदीक आएंगे। आँखों में खुशी के आंसू आएंगे।"

* वे कहते "पू. आ. श्री आगमोधारक श्री सागरानंद सुरीजी म.सा.और पू. आ. श्री रामचंद्रसूरीजी का बाप–बेटे जैसा सम्बन्ध था। पर नियति...."

* वे कहते "पू. आ. श्री लब्धिसुरीजी और पू. आ. श्री रामचंद्रसूरीजी के बीच शहद जैसा मीठा सम्बन्ध था।"

* वे कहते कि 'जब एक–दो तिथि का संघर्ष चालू था, तब भी दो तिथि पक्ष के पू.आ. भ. प्रेमसूरीजी म.सा. ने एक तिथि पक्ष के पू. आ. श्री उदयसुरीजी म.सा. के पास (पू. आ. श्री नेमिसुरीजी समुदाय) आलोचना ली थी।'

* वे कहते कि 'तिथि का समाधान हो, इस हेतु से मैं और पू. आ. श्री पद्मसागरजी म.सा.(अब बुद्धिसागरजी समुदाय के एक महान आचार्य) के साथ अनशन पर बैठने वाले थे, (पर किसी कारण से अनशन रद्द हो गया। पू. आ. श्री प्रेमसूरीजी ने ना कहलवायी कि अगर समाधान न हुआ तो आप दोनों का क्या होगा ? ऐसा जोखिम नहीं लेना।)'

* वे कहते कि 'पू. आ. श्री रामचंद्र सुरीजी को मेरे ऊपर विशेष स्नेह था ! मैं विहार करके खंभात पहुंचा, तब जिद करके मुझसे व्याख्यान करवाया।ग्रीष्म ऋतु में आम–केरी मिलती थी, तो मुझे स्वयं आग्रह करके वपराते। मैंने जब विहार किया तो खंभात के टावर तक विदा करने के लिए अपने सभी साधुओं को भेजा। एक पिता तुल्य वात्सल्य उनसे प्राप्त होता था, अनुभव भी होता था।'

* श्री शंखेश्वर तीर्थ में पू. आ. श्री कलापूर्ण सुरीजी स्मृतिमंदिर की जब प्रतिष्ठा हुई, उस समय पू.गुरुदेव श्री वहां उपस्थित थे। प्रतिष्ठा के कुछ दिन पूर्व पू. आ. श्री कीर्तियशसूरीजी वहां पधारे थे, तो मंदिरजी के बाई तरफ पुरानी एक कमरे में पू.गुरुदेवश्री उनके साथ दो–तीन घंटे बैठे थे, और वो भी सिर्फ इसलिए कि दोनों पक्षों के बीच समाधान कैसे हो, जिसके द्वारा संघ में शांति कैसे स्थापित हो । बस इसी एक मुद्दे पर ऐसा ही घाटकोपर–नवरोज़ लेन संघ में भी हुआ था।

* दो तिथि पक्ष के पू. आ. श्री तपोरत्न सुरीजी म.सा.ने साबरमती में समाधान की भूमिका हेतु सच्चे भाव से प्रयत्न किया था।

* पू.पं श्री वज्रसेन म.सा. के तमाम समुदाय के साथ उनका मैत्री भाव जग जाहिर है, और पू. आ. श्री हेमप्रभसुरीजी म. की विराट भावना भी प्रसिद्ध है। दोनों पूज्यश्री दो तिथिपक्ष वाले होने पर भी एक तिथि पक्ष के समुदाय के साथ भी उनका गोचरी–पानी–व्यवहार चालू ही है ।

*गच्छाधिपति पू. आ. श्री पुण्यपालसुरीजी म.सा. के संसारी पिताश्री पू. आ. श्री महाबलसुरीजी भी तमाम समुदाय के प्रति आतंरिक वात्सल्य बरसाने वाले एक महान विभूति है।

*पू. आ. श्री राजतिलक सुरीजी म. के शिष्य पू. आ. श्री हर्षतिलक सुरीजी म. ने दो तिथि पक्ष के अनेक आचार्यों के मिलन के समय भारी हृदय से जानकारी दी थी कि 'हमारे गच्छ की सामाचारी के हिसाब से एक तिथि पक्ष के साथ वंदनादि व्यवहार भले न करें, पर अपने श्रावक तो उनको वंदन–गोचरी आदि की भक्ति आदि कर सकते हैं ना ? हमको इस हेतु से उनको प्रेरणा करनी चाहिए। हमको हमारे श्रावकों को व्यक्तिरागी नहीं बनाना....'

यही आचार्य भ. हमको पाटण में मिले थे, वे एक ही दिन रुक के विहार करनेवाले थे। हम वहां दो तिथिपक्ष के मंडप के उपाश्रय में 17 दिन से रुके हुए थे। उन्होंने चालू व्याख्यान में प्रेरणा की कि इन महात्माओं के प्रवचन सुनना, जरा सा भी भय नहीं रखें।

एक ही दिन गोचरी के बाद डेढ़–दो घंटे तक उन्होंने खूब खुले मन से एवं पूरी आत्मीयता से बहुत सारी आनंद दायक बातें की।

* पू. आ. श्री पूर्णचंद्रसुरीजी के शिष्य पू. आ. श्री युगचंद्रसुरीजी भी पाटण में उनके ही पक्ष के उपाश्रय में हमको मिले, पूरा पूरा स्नेह सभर व्यवहार संसारी पक्ष से वे भी सूरत के और मैं भी सूरत का ! उनके भतीजी आदि की दीक्षा हुई थी, उनको उन्होंने हमको मिलने के लिए भी भेजा.... संयम– स्वाध्यायादि बातें भी की...

* गिरधर नगर में आराधक श्रावक हीराभाई ने पू.हितरुचि म.सा. के चातुर्मास हेतु जय बुला दी थी। मुश्किल ये थी कि उसी वर्ष दोनों पक्ष की संवत्सरी अलग आ रही थी। संघ के अन्य ट्रस्टी घबरा गए, क्योंकि संघ में बहुत सारे आराधक एक तिथि पक्ष की आराधना करने वाले गिने जाते हैं। उसमें ये दो तिथि पक्ष का चातुर्मास किस प्रकार से मान्य हो ? संघर्ष शुरू हुआ। तबके ट्रस्टी गण लालचंदजी आदि पू.गुरुदेवश्री के पास आये। पू.गुरुदेवश्री ने एक ही सलाह दी कि "हीराभाई आपके संघ के बहुत ही उच्चकोटि के आराधक हैं, और इतने वर्षों से इन्होंने संघ में समस्त प्रकार की सेवा दी है। उनके इस निर्णय को तोड़ना उचित नहीं है, इसे मान्य रखो और संघ में महात्माश्री की निश्रा में दो तिथि की आराधना करो, हाँ ! जिनको एक तिथि की आराधना करनी हो, उनके लिए अलग व्यवस्था भी आयोजित कर दो, पर ये संघर्ष तो टालो। और हकीकत में यही हुआ।"

* पू.पंडित म.सा. ने पालीताना चातुर्मास के दरम्यान अपनी निश्रा में आराधना करनेवालों को भी एक तिथि के हिसाब से आराधना करने की छूट दी थी।

अपनी निश्रा में पढ़ने आ रहे एक तिथि पक्ष के साधु को भी एक तिथि के हिसाब से आराधना करने की सम्मति दी थी।

ऐसी ऐसी तो अनेक बातें हैं ...

एक तिथि पक्ष के भी अनेक आचार्य भगवंतों ने अनेक प्रसंगों पर बहुत बार ऊंची उदारता दिखाई ही है। पर ये प्रसंग प्रसिद्ध हैं, इसलिए अब ये प्रसंग नहीं लूँगा।

खराब प्रसंगों को याद करके या चारों तरफ फैलाकर स्व–पर के अध्यवसायों को क्यों मलीन करें ? इसके बदले अच्छे प्रसंगों को याद करके, चारों तरफ फैलाकर स्व–पर के

अध्यवसाय पवित्र बने, ऐसी ही मेहनत करें !

ख़ास...

मैं बहुत छोटा हूँ,

मेरी भाषा में मैंने विनंती की है, कर रहा हूँ कि "सभी वडील तिथि प्रश्न के बारे में योग्य विचार करें, और कोई मजबूत निर्णय लेवें। जिससे संघ –शासन का नुक्सान न हो।" प्रभु संघ–शासन की रक्षा के काम में सहायक बने, सेनापति बने, ऐसी एकमात्र परम कृपालु को प्रार्थना...

लि. युगप्रधानाचार्यसम पूज्य पाद
गुरुदेवश्री चंद्रशेखरविजयजी म.सा.
के शिष्य गुणहंस विजय
आसो सूद 2,वि.सं.2071
श्री सरदार बाग श्वे.मू.जैन संघ, बारडोली।

प्रश्न एवं समाधान

प्रश्न : 'मानना एवं आचरण करना' इन दो बातों में फर्क है। संयमी जो संयम के आचारों का आचरण नहीं करता है, तो उसको संयम का अतिचार लगता है, इसमें निश्चय नय से भले वो मिथ्यात्वी कहा जाए, पर हकीकत में तो वो छठे गुण स्थान में ही रहा हुआ होता है।

इसलिए 'मुहपत्ति का उपयोग नहीं रखना' आदि दोषों का सेवन करनेवाले का आचार भले ही कमजोर पड़े, उसके कारण उसके संयम में भले ही कमजोरी आये, पर संयम नहीं जाता।

हाँ ! जो वो ऐसा मानने लगे, कि 'मुहपत्ति का उपयोग रखने की कोई आवश्यकता ही नहीं है', तो ये मान्यता की बात होगी, और उसमें तो उसे पहले गुण ठाणा का ही मिथ्यात्व आता है।

अब आजकल सभी संयमी 'मुहपत्ति का उपयोग रखना ही चाहिए', ऐसा तो मानते ही हैं, अतः पक्का मिथ्यात्व नहीं आता। हाँ ! ऐसा आचरण करने में खामी है, तो इतने अंश में उनका चारित्र कमजोर पड़ता है।

ऐसा दुसरे आचारों के बारे में भी समझ ही लें।

अब तिथि की बात अलग है। एक तिथि पक्ष वाले एक तिथि को यानि गलत तिथि का आचरण तो करते ही है, और वापस ऐसा मानते हैं 'कि एक तिथि ही सच्ची है....'

अथवा

दो तिथि पक्षवाले दो तिथि का यानि गलत तिथि का आचरण तो करते ही हैं, और वापस ऐसा मानते हैं कि 'दो तिथि ही सच्ची है ।'

वैसे इनका आचार और इनकी मान्यता दोनों ही गलत है...अतः वे सही मायने में मिथ्यात्वी साबित होते हैं। इसीलिए ही वे अवन्दनीय बनते हैं।

ऐसे मुहपत्ति आदि आचारों के बाबत में और तिथि के बाबत में बहुत अंतर है, ये खास ध्यान योग्य है। मुहपत्ति आदि में सब की मान्यता सच्ची है, सिर्फ आचरण ही गलत है। जबकि तिथि के बाबत में मान्यता और आचरण दोनों गलत है।

आपके प्रश्न के सामने मुझे ये जवाब सूझ रहा है।

पू. आ. श्री सिद्धसेनदिवाकरसुरिजी ऐसा मानते है कि ' केवली को कायम के लिए सिर्फ ज्ञानोपयोगही ही होता है ।'

पू जिनभद्र गणिजी ऐसा मानते है कि 'केवली को क्रमशः ज्ञान का और दर्शन का उपयोग होता है ।' दोनों महापुरुषों ने अपनी अपनी मान्यता को सच्ची करनेकी प्रचुर मात्रा में युक्तियां भी दी है।

इसमें से एक की मान्यता तो गलत ही है ना? तो एक महापुरुष तो मिथ्यात्वी ही है ना ? पर ऐसा अपन नहीं मानते। कारण कि पू महोपाध्यायजी ने धर्मपरीक्षा ग्रन्थ में स्पष्ट दर्शाया है कि पू सिद्धसेन सुरीजी अपनी मान्यता को जिन आज्ञा समझकर ही स्वीकार करते थे...

पू जिनभद्रसुरिजी अपनी मान्यता को जिनआज्ञा समझकर स्वीकार करते थे...

सिर्फ ये जिन आज्ञा समझने में ही दोनों में से एक की गलती हुई है। पर 'ये जिन आज्ञा नहीं, फिर भी मैं ये मानूँ' ऐसा तो दोनों में से किसीके भी मन में नहीं था। इसलिए जिन आज्ञा बहुमान में कमी नहीं है। इसलिए ही दोनों सम्यक्तवी !

पू महोपाध्यायजी ने दोनों में से किसी भी एक महापुरुष को मिथ्यात्वी नहीं कहा, हाँ ! वे मन में समझते हैं कि 'दोनों में से किसी भी एक की मान्यता तो गलत ही है ।' फिर भी वे ऐसा भी समझते हैं कि 'जिन आज्ञा से विपरीत पदार्थ में भी सम्यग्दृष्टि आत्मा श्रद्धा करके बैठता है, फिर भी उनके सम्यक्त्व को आंच नहीं आती।' ऐसी श्रद्धा होने के दो कारण (1) अनाभोग (2)

गुरुनियोग यानि कि स्वयं गलत समझ के बैठे और जिन आज्ञा से विपरीत पदार्थ में श्रद्धा कर ले, अथवा तो गुरु ही उसे गलत समझा दे (गुरु को भी अज्ञानादि कारण तो अटकते ही है ना) और इसीलिए वे गलत पदार्थ में श्रद्धा करते हैं।

ऐसा तिथी बाबत में दोनों पक्ष दोनों के लिये नहीं सोच सकते हैं ? कि "सामनेवाला पक्ष जो मानता है, वो गलत हो तो भी वो पक्ष अनाभोग से या गुरुनियोग से गलत को सही मान रहा है। इसलिए भले उसके ज्ञान में कमी हो, मगर उसके सम्यग ज्ञान को आंच नहीं आती।"

प्रश्न : पर कोई कदाग्रह वाला हो तो ?

उत्तर : भाग्यशाली ! ऐसा हो, तो भी ये कदाग्रह कितने लोगों में ? मोटे भाग में तो गुरु के कथन के हिसाब से ही करते हैं ना ? उनको 'गुरुनियोग' कारण तो लगता ही है ना ? अरे ! तिथि के विषय में संपूर्ण ज्ञान जाननेवाले कितने ?

बडे भाग के एक तिथि पक्षवाले एक तिथि पक्षवाले से सुन सुन कर एक तिथि को सही मानने लगा है ना ? क्या उन्होंने दो तिथि पक्षवाले के पास जाकर, उनके विद्वानों के पास दो तिथिपक्ष की बात सुनी है क्या ? समझी है क्या ?

वैसे ही बड़े भाग के दो तिथिपक्षवालों ने दो तिथिपक्षवाले से सुन सुन कर दो तिथि को सही मानने लगे है ना ? क्या उन्होंने एक तिथिपक्षवाले के पास जाकर , उनके विद्वानों के पास एक तिथिपक्ष की बात सुनी है क्या ? समझी है क्या ?

शास्त्रों में स्पष्ट लिखा है कि 'कोई साधु आधाकर्मी गोचरी भी भूल से निर्दोष समझकर उपयोग करता है, तो उसे आधाकर्मी का दोष नहीं लगता ।'

वैसे संयमी गलत तिथि को भी भूल से सही तिथि मानकर उसकी आराधना करे, तो उसे दोष नहीं लगता ।

इस विषय में मेरी समझ के प्रमाण से मैंने लिखा है ।

अभी इसमें बहुत से प्रश्न हो सकते हैं...फिर भी मुझे लगता है कि जो कोई भी जिज्ञासा से मुझे या किसी भी संविग्न गीतार्थ महात्मा को पूछेगा, तो अवश्य उसका समाधान उसे मिलेगा ही।

मेरी भावना तो सिर्फ इतनी ही है की ज्यादा से ज्यादा जीव मोक्ष मार्ग पर आगे ही आगे बढे।

प्रभु मेरी भावना को सफल बनायें।

प्रभु मेरी भावना में जो भूल से भी मलीनता हो, तो उसे दूर कर पवित्र बनाएं।

प्रभु मेरे संघ की रक्षा करे....

।। नमोस्तु तस्मै जिनशाशनाय।।

सुकृत अनुमोदना कीजिए,
जिम होय संवर वृद्ध रे...

माता

संवेदना है, भावना है,
अहसास है

माँ जीवन के फुलों में
खुशबु का वास है

माँ रोते हुए बच्चे का
खुशनुमा पलना है

माँ मरूथल में नदी या
मिठा सा झरना है

माँ आंखो का सिसकता हुआ किनारा है

माँ की गोद, वात्सल्य की धारा है
माँ कलम है, दवात है,
स्याही है

माँ परमात्मा की स्वयं
एक गवाही है

माँ अगर मैं कहुं कि तू देवी है,
तो देवी सिर्फ वरदान देती है...
लेकिन मेरी माँ तुने तो
मुझे जीवनदान दिया है
इसलिए तेरी महिमा देवी
से भी बढकर है।

श्रीमती शांतिबाई शाह

(मरुधर में दासपा हाल पुणे)

स्वर्गवास दिवस : दि. 12.09.2016

तिथि : वि.सं. 2072 - भाद्रवा सुदी 10

पुत्र-पुत्री :
अमित शाह-कल्पना शाह

पुत्री-जमाई :
कविता-दिवसजी

क्या गलत

पर्व तिथि

की आराधना करनेवाले

* सम्यक्त्वी गिने जायेंगे या मिथ्यात्वी
* वंदनीया होगें या अवंदनीय
* चारित्रसंपन्न होगें या नहीं
* सद्गुरु होंगे या कुगुरु
* संघ सभ्य गिने जायेंगे या संघबहार

इन सारे प्रश्नो के जबाब के रूप में
यह पुस्तिका अपने हाथ में....

मिथ्यात्व